चन्दामामा
मई १९९१

सर्कस चालबाज़

मौजमज़ा शुरू हुआ. एक नहीं, रहस्य कई. आओ, चलें साथ, ताकि राज़ लगे हाथ.
चौधरी की बच्ची ग़ायब. सर्कस चालबाज़ की चाल फिर शुरू. सर्कस में कौन ज़िम्मेदार है गुरू? बीएसए एसएलआर राज़ ढूंढने वाले चार खुफ़िया बन के खतरनाक दुश्मन के लिए तैयार.

छुट्टी हुई. प्रियंका स्कूल से घर चली. अचानक एक लाल कार के सभी शोहदे सवार उसे ले गए उठा और उसे दिया बिठा एक कमरे में जहां मोमबत्ती रोती थी, जानवरों का गुर्राना सुनके वो न सोती थी. डर रही थी प्रियंका – भूखे शेर आएंगे और हमें खा जाएंगे.

रात ८ बजे. ट्रिंग ट्रिंग फ़ोन बजा. दुखी चौधरी ने उसे लिया उठा. "चाहते हो देखना अपनी बेटी ज़िंदा...? तो काम इतना करो बस. रविवार दोपहर पौने बारह बजे, ढाई लाख रुपये लेके पहुंच आओ सीधे सर्कस. और सफ़ेद सूट पहनना... चौधरी, तू खूब फंसा..." ठट्ठा कर के दुष्ट हंसा.

आ गए बीएसए एसएलआर राज़ ढूंढनेवाले यार

शुक्रवार: "दिन कहां बचे हैं यार. आज शुक्रवार, कल शनि. परसों ही तो रविवार." विपुल था तेज़ तर्रार. सिर पर आइडिया सवार.

"क्यों न देखने चलें वो जगह?" "हां, यार. उठाएं अपनी अपनी बीएसए एसएलआर." राल्फ़ हो गया तैयार आगे था अंधकार. ठोकरें और झटके सारे. राज़ ढूंढने वाले चार तेज़ रफ़्तार अपनी अपनी बीएसए एसएलआर पर सवार भागे जाएं, ब्रेक मारें. अचानक उत्सुकता बढ़ी. उन्हें कदमों की आहट सुनाई पड़ी. "दीवार के पीछे जल्दी छिप लो यार." पूजा ने कहा. छिपे हुए चारों ने सुना – उनको यही कहते, "रविवार आएगा. ढाई लाख दे जाएगा, वर्ना..." ठहाके लगाके वो कहते जाते. वो गये, ये निकले. एक रुमाल इन्हें मिला, जिस पर था "J" लिखा. "चलो, चलें. शायद इसी से सुराग मिले." चल पड़े वो सभी यार अपनी बीएसए एसएलआर पर सवार.

शनिवार: "J", किसका होगा ये रुमाल. प्रियंका के मिलने का जवाब सवाल मथ रहा था विपुल के ख्याल.

का गहरा

रविवार: चौधरी साहब थे ही घबराए, सफ़ेद सूट पहने और करारे सौ सौ के नोटों में ढाई लाख सजाए. सर्कस का शो शुरू हुआ. ट्रैपीज़ पर जोखम भरे झूले झूलने वाले कलाकार दिखाने लगे करतब. फिर जोकर आया. अपनी ऊलजलूल हरकतों से उसने सबको हंसाया. अचानक राज़ ढूंढनेवाले चारों ने देखा कमाल. हवा में गिरता आया एक रुमाल. उस पर भी वही "J"

चिल्लाए सभी वे, "चौधरी अंकल... मिल गया. दौड़ो दौड़ो, अपनी बीएसए एसएलआर उठाओ. पुलिस को जल्दी बुलाओ."

चालबाज़ अपराधी, उसके सभी दोस्त साथी... पकड़े प्रियंका छुड़ाई गई.

बीएसए एसएलआर पर अगर न निकले होते शुक्रवार रात, तब कभी न बनती बात. खुला राज़, पकड़ा गया चालबाज़.

जब पागल पप्पू का पाओगे राज़ तो पकड़ लोगे चालबाज़. फिर मिलेंगे. तब तक चलाते रहो यार अपनी बीएसए एसएलआर.

CASIO
सुर के परदों पर हाथ फिराओ
मस्ती में झूम-झूम जाओ

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

जलते हुए कुएँ

खाड़ी युद्ध समाप्त हो चुका है । कुवैत को इराक के कब्जे से छुड़ाया जा चुका है ।

लेकिन कुवैत को छोड़ते समय इराकियों ने सैकड़ों तेल के कुओं को आग लगा दी । कुएँ बुरी तरह से जल रहे हैं और हर रोज़ खरबों रुपये का तेल ऐसे ही बरबाद जा रहा है । विशेषज्ञों का कहना है कि इन कुओं की आग पूरी तरह बुझाने में कई साल लग सकते हैं ।

इराकियों ने यह हरकत क्यों की?

उनका मानना था कि तेल कुवैत का है, और तेल को बरबाद करके वे कुवैत को नुकसान पहुँचा रहे हैं । लेकिन तेल तो ऐसी संपदा है जो प्रकृति ने समूचे विश्व के लिए तैयार की है । जो कोई इस संपदा को निजी संपत्ति मानकर चलता है, ग़लती करता है ।

समय आ गया है कि सब देश मिलकर बैठें और इस बात का फैसला करें कि क्या-क्या विभिन्न देशों का हो सकता है और क्या सभी देशों या मानवता का है । ऐसी समस्याओं का यही समाधान है ।

वर्ष : ४३ | मई १९९१ | अंक : ९

एक प्रति : ३ रुपये | वार्षिक चन्दा : ३६ रुपये

MAGGI CLUB
मैगी क्लब से मुफ़्त उपहार पाओ, मौज-मस्ती के रंग जमाओ!
आओ बच्चो! मैगी क्लब में शामिल हो जाओ, सारे साल मौज मनाओ. न्यूज़ लैटर्स, उपहार, गेम्स और मौज-मस्ती की कई अन्य चीज़ें...
बस तुम यह मैगी नूडल्स के 5 खाली रैपरों के सामने के हिस्से से काटकर हमें भेज दो. और, साथ में अपना नाम, पता और अपनी पसंद का उपहार भी लिख भेजना. हां, अगर तुम मैगी क्लब के सदस्य हो तो सदस्यता संख्या भी ज़रूर लिखकर भेजना. और, अगर तुम मैगी क्लब के सदस्य नहीं हो तो अब मौका मत चूकना. अपना विवरण भेजते समय सदस्यता कार्ड भी मंगवा लेना. हम तुम्हारे उपहार के साथ मैगी क्लब सदस्यता कार्ड भी मुफ़्त भेज देंगे!
हमारा पता है:
मैगी क्लब
पो. ओ. बॉक्स 5788
नई दिल्ली-110 055
'मैगी जादू जंगल' से अपना जंगल बनाओ.
'मैगी बर्डहाउस' बनाओ
TO LET
Archie
मुफ़्त
मुफ़्त! मैगी 'वर्ल्ड ऑफ़ एनीमल्स' चित्र पुस्तिका.
तुम जो 3 उपहार इकट्ठे करोगे तो उसके साथ हम तुम्हें मुफ़्त मैगी 'वर्ल्ड ऑफ़ एनीमल्स' चित्र पुस्तिका भेजेंगे. उसमें तुम्हें मिलेगी वन्य-प्राणियों के बारे में दिलचस्प और आश्चर्यजनक जानकारी. हर पेज में पूरा विवरण देख लेना.
MAGGI
2-minute noodles
Name:
Membership no.
एक और मौका! अगर तुमने 'लॉन ऑफ़ द जंगल गेम' अभी तक नहीं लिया है तो अब ले लो!

यह युद्ध भी खत्म हुआ

खाड़ी युद्ध समाप्त होने से बड़ी राहत मिली है। लेकिन इसे लेकर खुश होने की कोई बात नहीं। वास्तव में तो यह सोचकर दु:ख होता है कि इस युद्ध की ऐसे वक्त शुरुआत हुई जबकि संसार में हर कहीं शांति संस्थाएं कार्यरत हैं और वे हर वक्त राष्ट्र-राष्ट्र के बीच झगड़ा हो जाने पर सुलह-सफाई करवाने को तैयार रहती हैं।

ऐसी संस्थाओं में संयुक्त राष्ट्र संघ अग्रणी है। आओ, ज़रा देखें इसकी इस युद्ध में भूमिका क्या रही है। यह ज़रूरी भी है।

संयुक्त राष्ट्र का जन्म २४ अक्तूबर १९४५ को "अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाये रखने के लिए" हुआ था। इसकी सदस्यता सभी राष्ट्रों के लिए एकसमान थी, चाहे कोई बड़ा हो या छोटा। इसके घोषणापत्र में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि यह "आनेवाली पीढ़ियों को युद्ध की विभीषिका" से बचाने की दिशा में काम करेगा।

इराक ने अपने पड़ोसी, एक छोटे किंतु प्रभुसत्ता-संपन्न राष्ट्र ने कुवैत पर हमला करके उसे अपने कब्ज़े में कर लिया था। संयुक्त राष्ट्र ने इराक से कहा कि वह कुवैत से हट जाये। उसने यह बात एक बार नहीं, कई बार कही। लेकिन इराक ने इस पर कान नहीं धरा। आखिर संयुक्त राष्ट्र को अपने सदस्य देशों से कहना पड़ा कि वे बलपूर्वक कुवैत को रिहा करवायें। इन देशों में सब से आगे अमरीका आया। वैसे उसकी मदद को ३७ और देश भी आये। लेकिन जिन देशों ने सैनिक कार्रवाई में मुख्य रूप से हिस्सा लिया, वे थे मिस्र, फ्रांस, साऊदी अरब, तथा इंगलैंड, हालांकि कनाडा और जर्मनी भी ज़्यादा पीछे नहीं थे।

युद्ध का उद्देश्य इराक को हराना नहीं था, बल्कि कुवैत को आज़ाद कराना था। इराकी सेनाओं से युद्ध करनेवाले अधिकांश देश किसी भी राष्ट्र के स्वतंत्र रहने के अधिकार को बनाये रखना चाहते थे।

उनका उद्देश्य पूरा हो गया है। कुवैत अब आज़ाद है। लेकिन इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए काफी खून-खराबा हुआ, समुद्र, वायु और जल प्रदूषित हुए, हज़ारों घर बरबाद हुए और बेहिसाब पैसा खर्च करना पड़ा। क्या इस सब से बचा नहीं जा सकता था? क्यों नहीं, ज़रूर बचा जा सकता था। इराक संयुक्त राष्ट्र का सदस्य है। सदस्य होने के नाते उसे चाहिए था कि वह संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों का पालन करता।

बहरहाल इस युद्ध से जो खास बात उभरकर आती है वह यह है कि संयुक्त राष्ट्र

अब भी ऐसी स्थिति में नहीं पहुंचा है जिससे वह अपने ध्येय शांतिपूर्ण ढंग से पूरी तरह पूरे करवा सके । अब वक्त आ गया है कि संसार की इस महान संस्था की इस कमज़ोरी पर इसके सदस्य अच्छी तरह विचार करें । दरअसल, संयुक्त राष्ट्र को और भी मज़बूत होना होगा ताकि वह भविष्य में ऐसे किसी झगड़े से क्षमता पूर्वक निबट सके ।

वनदेवी का उपासक
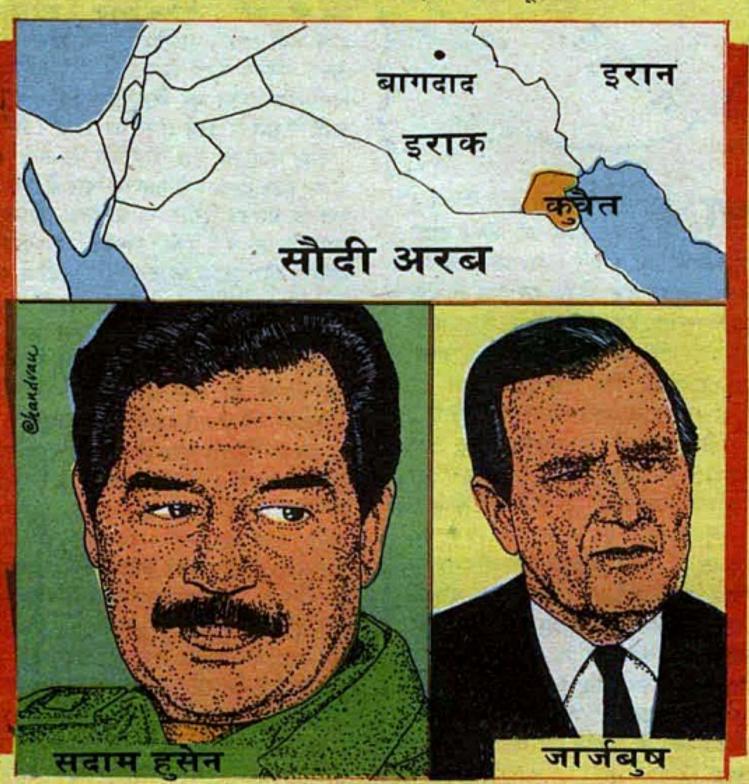
सूरतपुर में एक गरीब परिवार था । परिवार में केवल तीन ही सदस्य थे—पति, पत्नी और बेटा । पति का नाम परमेश था, पत्नी का पार्वती और बेटे का शिव । उनकी एक छोटी-सी बगिया थी जिसकी वे बड़े लाड़ और प्यार से देख-रेख करते । दरअसल, वही बगिया उनकी जीविका का साधन भी थी । बगिया के पौधे अनके हाथ का स्पर्श करते ही खिल उठते । इस पर शिव की माँ अपने बेटे से कहती—यह तो हम पर वनदेवी की कृपा का प्रताप है!

एक बार पार्वती बीमार पड़ी । इलाज करवाने के लिए उनके पास फूटी कौड़ी भी न थी । इसलिए शिव के पिता परमेश को कर्ज़ लेने के लिए गाँव के साहूकार कुबेर के पास जाना पड़ा । कुबेर पूरा सूदखोर था । वह सूद-दर-सूद लगाये जाता और फिर लाचार लोगों की ज़मीन-जायदाद हड़प कर लेता ।

परमेश को कर्ज़ मिला तो सही, पर उनकी बगिया रेहन रख ली गयी । और कर्ज़ की रकम भी क्या थी, केवल चार सौ रुपये, जो ऐसे ही धू-धू करते खत्म हो गये । यानी इलाज तो किसी तरह हुआ, पर शिव की माँ, पार्वती को नहीं बचाया जा सका । उनकी सब कोशिशों पर पानी फिर गया । गरीबी तो थी ही घर में, अब कंगाली आ गयी ।

मरते वक्त पार्वती ने अपने बेटे शिव को अपने पास बुलाकर कहा, "बेटे, वनदेवी बहुत ही कृपालू और कोमल-हृदय है । उसे कभी मत भूलना ।"

एक साल ऐसे ही बीत गया । एक दिन साहूकार कुबेर परमेश के यहाँ आया और बोला, "देखो भाई, जो कर्ज़ तुमने लिया था, वह सूद समेत पाँच गुना हो गया है । इसलिए जब तक तुम यह रकम अदा नहीं करोगे तुम्हारी बगिया तुम्हें वापस नहीं

अनिता शर्मा

मिल पायेगी ।" और उसने, परमेश के साथ किन्हीं कागज़ों पर कुछ और लिखा-पढ़ी कर ली ।

उस दिन से परमेश और उसका बेटा शिव उस बगिया के केवल रखवाले बनकर रह गये । ऐसे ही एक साल और बीत गया । कुबेर ने एक दिन परमेश से फिर कहा, "देखो परमेश, कर्ज़ चुकाना तो तुम्हारे बस का है नहीं, इसलिए बगिया के सपने लेना तो छोड़ दो । हाँ, एक काम कर सकते हो । अपने बेटे शिव को मेरे यहाँ घर का काम करने भेज दिया करो । इससे कुछ तो कर्ज़ कम रहेगा!" इस तरह कुबेर ने ऐसी चाल चली जिससे शिव उसके घर का नौकर बन गया ।

देखते-ही-देखते एक साल और बीत गया । शिव अब समझ गया था कि वह और उसका पिता कुबेर की चाहे कितनी भी गुलामी करें, उनका कर्ज़ तो कभी चुकने वाला नहीं । फिर एकाएक उसे अपनी माँ की बात याद हो आयी जो उसने मरते समय कही थी । शायद वनदेवी की कृपा से ही उनके कष्टों का अंत हो जाये, उसने सोचा, और फिर दृढ़ निश्चय करके वह रात होते ही पास के जंगल की ओर भाग गया ।

गर्मियों के दिन थे । गर्मी भी बला की थी । दौड़ते-दौड़ते शिव एक पानी के झरने के पास पहुँचा । वहाँ आस-पास के कुछ पौधे सूखने को थे । शिव ने उन्हें झरने के पानी से सींचा, और यह क्रम एक माह तक बनाये रखा । अब सूखे पौधे हरे होने लगे थे । इससे वनदेवी प्रसन्न हो गयी और वह प्रत्यक्ष रूप में शिव के सामने प्रकट हुई । "बोलो, तुम्हें क्या चाहिए," वह बोली, "मैं तुम्हारी सेवा से बहुत संतुष्ट हूँ ।"

वनदेवी को अपने सामने पाकर शिव ने झुककर प्रणाम किया और उसे अपना सारा दुखड़ा कह सुनाया ।

वनदेवी शिव की बातें सुनकर उसके प्रति पूरी तरह सहानुभूत हो गयी । एक पेड़ की शाखा से अजीबोग़रीब फल लटक रहा था । वनदेवी उसे दिखाकर शिव से बोली, "वह फल मेरी शक्ति के कारण ही तुम्हें दिखाई दे रहा है । यदि तुम उसे खा लो तो तुम्हें कोई नहीं देख पायेगा; इसकी सहायता से तुम अपनी समस्या का हल पा सकते हो । तब

तुम्हें मेरे पास वापस आना होगा । मैं तुम्हें तुम्हारा वास्तविक रूप लौटा दूंगी । यदि ज़रा भी तुमने वापस आने में देर की तो भविष्य में मैं तुम्हें फिर कभी नहीं दिखूंगी और तुम्हें बाकी की ज़िंदगी इसी तरह अदृश्य रहकर गुज़ारनी होगी ।" इस तरह शिव को चेताते हुए वनदेवी लोप ही गयी ।

शिव ने पेड़ से वह जादुई फल तोड़कर खा लिया । फिर वह गाँव में पहुँचा तो उसके पिता को कुबेर ने एक पेड़ मे बांध रखा था और उसे इमली के डंठल की छड़ी से ताबड़तोड़ पीट रहा था ।

अपने पिता का कुबेर के हाथों इस तरह पिटना शिव से बरदाश्त नहीं हुआ । उसे कोई देख तो सकता नहीं था, इसलिए उसने कुबेर को एक ज़ोर की लात जमायी । लात का लगना था कि कुबेर बुरी तरह से एक ओर लुढ़क गया ।

कुबेर कराहने लगा तो वहाँ भीड़ जुटने लगी । लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि यह माजरा है क्या! फिर शिव ने कुबेर वाली वही इमली की छड़ी उठा ली और लगा उसे कुबेर पर सटाक-सटाक चलाने । कुबेर पिट-पिटकर बेहोश-सा हो रहा था । शिव ने उस मौके को हाथ से जाने न दिया और उसकी कमर पर बंधे चाभियों के गुच्छे को खोलकर वहाँ से खिसक लिया ।

वहाँ से शिव सीधा कुबेर की कोठरी की ओर बढ़ा । कोठरी में कुबेर की तिजोरी रखी थी, उसने तिजोरी को खोला और उसमें पड़े

कर्ज़ के कागज़ों को निकाल कर उन्हें ज़मीन पर पटक दिया और फिर उन्हें आग लगा दी । कुबेर भी अब तक वहाँ से भागता हुआ अपनी तिजोरी वाली कोठरी तक पहुँच गया था । जब उसने उन कागज़ात को जलते हुए देखा, तो वह पागलों की तरह चीख-पुकार करते हुए अपने बाल नोचने लगा ।

शिव की समस्या का हल हो चुका था । इसलिए वह तुरंत जंगल की ओर बढ़ा । रास्ते में एक घर के बरामदे में उसने रात काटने की सोची । वहाँ घर के भीतर एक बूढ़ा-बूढ़ी आपस में रो-रो कर बातें कर रहे थे । उसने उन्हें ग़ौर से सुना । वह समझ गया कि इस घर का मालिक एक बूढ़ा है जिसने अपनी बेटी की शादी के लिए काफ़ी

तब तक सुबह होने वाली थी ।

गुफा में चोरों का सरदार उनका इंतज़ार कर रहा था । अपने साथियों की बात सुनकर वह आग-बबूला हो गया और गुस्से से भर्रायी आवाज़ में बोला, "क्या कहते हो! सिर्फ एक जगह ही दहेज़ की सारी रकम पर हाथ रख पाये? तुम्हें यह कहते शर्मा नहीं आती!" इतना कहकर अपने को कालू सरदार कहने वाला वह चोर पास के एक जल-प्रपात की ओर बढ़ गया । शिव समझ गया कि इन्हीं लोगों ने उस बूढ़े दंपति के घर सेंध लगायी है ।

जैसे ही कालू सरदार प्रपात की ओर बढ़ा, शिव उनकी गुफा में घुस गया और उसने उस बूढ़े दंपति की सारी रकम बटोर कर एक गठरी में बांध ली, बाकी का माल-मत्ता भी एक दूसरी गठरी में बांध लिया और दोनों गठरियों को लिये-लिये वह वहाँ से लौट पड़ा ।

रास्ते में पहले उस बूढ़े दंपति का घर पड़ता था । उसने एक खिड़की से उनकी चुरायी गयी रकम वाली गठरी उनके घर के भीतर कर दी । वहाँ से वह सीधा राज दरबार में पहुँचा । दूसरी गठरी उसने राजा के पांवों के पास रख दी ।

"राजन्, आप परेशान न हों । यह वही संपत्ति है जो कालू चोर और उसके साथी, लोगों के घरों से चुराते रहे । इसे इसके सही हकदारों को वापस भिजवा दीजिए । कालू नाम का यह खतरनाक चोर जंगलकी दक्षिण

रकम जुटा रखी थी, और उसे चोर चुराकर ले गये थे । खैर, शिव को पता चल गया कि चोरी करने वाला कालू नाम का चोर था । उसने निश्चय किया कि वह इस परिवार की ज़रूर मदद करेगा ।

वह उस घर से बाहर आया, और अंधेरे में इधर-उधर सुनसान रास्तों पर भटकने लगा । उसे एक घर में सेंध लगाते दो चोर दीख पड़े । शिव ने ज़ोर से आवाज़ लगायी, "कौन हो तुम लोग? ओह, तो यह तुम आज दूसरी चोरी कर रहे हो!"

शिव की आवाज़ सुनकर दोनों चोर एकदम घबरा गये और वहाँ से दुम दबाकर भागे । शिव उनका पीछा करता रहा । चोर जंगल में एक गुफा के निकट जाकर रुके ।

दिशा में जल-प्रपात के निकट एक गफा में रहता है । उसके साथी भी इस वक्त वहीं हैं । बिना वक्त खोये उन सब को अपनी हिरासत में लें, यही मेरी आप से प्रार्थना है ।" शिव बोला ।

कोई दिखाई तो दे नहीं रहा था । इसलिए राजा ने हैरान हुए प्रश्न किया, "महात्मा, मेरे राज्य का इस तरह उपकार करने वाले आप हैं कौन?"

शिव ने राजा के प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया । वह वहाँ से वनदेवी के पास आया और बोला, "माँ, मुझे लौटने में देर हो गयी । मुझे क्षमा करना!"

देवी गुस्से में थी । बोली, "तुम ने मेरे आदेश का ठीक से पालन नहीं किया । मैंने तुम्हें यह शक्ति केवल तुम्हारे अपने काम को पूरा करने के लिए दी थी । तुमनें तो दूसरों का काम भी कर डाला । अब तुम्हें इसका दंड मिलेगा । तुम्हें हमेशा इसी रूप में रहना होगा ।"

शिव बोला, "माँ, तुम जो भी दंड देगी, मैं खुशी-खुशी स्वीकार करूंगा । मैं ज़्यादा चिंतित अपने पिता के लिए हूं । बस, इतना आशीर्वाद दो कि उन्हें कोई कष्ट न हो ।"

अब वनदेवी का गुस्सा ग़ायब था । मुस्कराते हुए बोली, "पुत्र, मैं तो तुम्हारी परीक्षा ले रही थी । तुम पूरी तरह से निस्वार्थी हो और परोपकारी भी हो । ऐसे परोपकारी को मैं किस अपराध में सज़ा दूं!" और यह कहते हुए देवी ने उसे अपना पहले वाला रूप दे दिया ।

अपना प्राकृत रूप पाकर और देवी को श्रद्धापूर्वक नमन करके शिव वहाँ से लौट पड़ा । उसका पिता अपने पुत्र को वापस आया देख बहुत खुश हुआ । उनकी बगिया में अब बहुत ही कीमती फूल उग आये थे जिससे धन-दौलत खुद-ब-खद उनके यहाँ बरसने लगी । पर इतनी संपन्नता पाकर भी वे पहले की तरह विनम्र बने रहे और दीन-दुखियों तथा ज़रूरतमंदों की मदद करते रहे । अब लोग शिव को परोपकारी शिव कहते थे ।

धंधे का भेद

शिल्लंगेरी गांव का धर्मानंद अपनी पत्नी और पुत्री के साथ एक विशेष पुण्यस्थली के तीर्थ पर अपने गांव से रवाना हुआ । उस पुण्यस्थली तक पहुंचने के लिए एक नदी को पार करना पड़ता था ।

नदी के किनारे पहुंचे तो वहां पहले ही कुछ यात्री इंतज़ार में दिखे । उन्हें भी नदी-पार जाना था । वहां एक नाव भी थी । नाव का मल्लाह भी वहीं था ।

धर्मानंद ने उससे पूछा, "भाई, पार ले जाने के कितने पैसे लोगे?"

"एक रुपया, फी यात्री," मल्लाह ने उत्तर दिया ।

नदी में पानी काफी था । बल्कि उसका कोई ओर-छोर ही दिख नहीं रहा था । धर्मानंद को हैरानी हुई । केवल एक रुपया! खैर, वह मल्लाह से कुछ नहीं बोला और अपनी पत्नी और बेटी के साथ नाव में जा बैठा । बाकी यात्री भी बैठ गये ।

नदी पार करने के बाद सब यात्री देव-दर्शन के लिए वहां के मंदिर पर पहुंचे और दर्शन करने के बाद वापस नदी-किनारे आ गये । दरअसल, उन्हें उसी दिन वापस नदी-पार जाना था, क्योंकि मंदिर पर रुकने की कोई व्यवस्था न थी और न ही वहां भोजन की कोई व्यवस्था थी । उधर अंधेरा भी उतरने को था, और वे अंधेरे में किसी प्रकार का जोखिम नहीं उठाना चाहते थे ।

मल्लाह अपनी नाव के साथ वापस जाने को तैयार था, लेकिन अब वह फी यात्री पांच रुपये मांग रहा था । "यह क्या?" धर्मानंद को फिर हैरानी हुई । "उधर से आये तो केवल एक रुपया फी यात्री मांगा, और अब पांच रुपये फी यात्री मांग रहे हो! तुम्हारा मतलब है, अब हम तुम्हें तीन रुपये के बजाय पंद्रह रुपये दें? हद कर रहे हो!"

"आप परेशान क्यों होते हैं, हुज़ूर! आपको भी अब यह इत्ती-सी बात बतानी पड़ेगी? यह तो धंधे का भेद है" उत्तर देते हुए मल्लाह मंद-मंद मुस्करा रहा था ।

—किशन आर्य

अपूर्व के पराक्रम

२

[हिमालय की कंदराओं में रहनेवाले मुनि सदानंद ने यज्ञ करके प्रकृति के तत्त्वों से एक नन्हे-से मानव का निर्माण किया । उस मानव का नाम अपूर्व था । उसका आकार एक गुड़िया के आकार से अधिक नहीं था । वह बहुत ही नेक और बहादुर था । उसने एक जलते हुए गांव को हाथियों की मदद से बचाया । हाथियों ने उससे इशारा पाकर अपनी सूंडों में पानी भरकर उसे फव्वारे की शकल में आग पर फेंका । — अब आगे पढ़िए ।]

हाथियों ने ज़मींदार के पिट्ठुओं का पीछा किया । उनमें से कुछ तो ज़मीन पर गिर पड़े और कुछ भागकर घास के मैदान को पार करने में कामयाब हो गये और गांव में ग़ायब हो गये ।

हाथियों ने उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचाया । वे केवल थोड़ा-सा चिंघाड़े और फिर जंगल को लौट गये ।

अपूर्व ने जब ज़मींदार के पिट्ठुओं को गरीब गांववालों को परेशान करते देखा थ तो वह बहुत दुखी हुआ था । वैसे तो वह इ संसार में नया था, पर उसमें ज्ञान औ बुद्धिमत्ता की मात्र उतनी थी जितनी किस संन्यासी को सौ साल में प्राप्त होती है । व प्रकृति की गुप्त शक्तियों से तुरंत संपर्क साधने में सक्षम है । इन्हीं शक्तियों क माध्यम से उसने हाथियों को बुलाया था, औ अब उन्हें साधुवाद कहकर चाह रहा था कि

वे लौट जायें।

वास्तव में, संसार के इस दृश्य को देखकर वह खुश था। बयार में झूमते पेड़ों को देखकर वह गद्गद हो रहा था। नदी की बहिया पर नाचती तरंगों और पक्षियों के चहचहाने पर वह मुग्ध था।

घास के मैदान के पार, पहाड़ियों के पीछे सूरज डूबना उसे अद्भुत लग रहा था। लेकिन एकाएक बहती हवा में उसे एक चीख सुनाई दी।

कोई साधारण मानव वह चीख सुन नहीं सकता था। लेकिन वह तो दूर की चीज़ें देख भी सकता था और सुन भी सकता था। अगर कोई बेआवाज़ भी चीख रहा हो, तब भी वह उसे सुन सकता था।

उसने दौड़ना शुरू कर दिया, और जैसे ही उसकी गति तेज़ हुई, वह अदृश्य हो गया। वह प्रकाश की गति से जा मिला था। यदि वह दौड़ते हुए अदृश्य न भी होता, तब भी वह इतना तेज़ दौड़ रहा था और आकार में वह इतना छोटा हो गया था कि मुश्किल से ही कोई उसे देख पाता।

अब अपूर्व एक गांव के बाहर एक झोंपड़ी के सामने खड़ा था। अंधेरा पहले ही उतर चुका था।

"मुझ पर दया करो। मेरे इस अबोध बच्चे को बख्श दो। इसके बदले मेरे पास जो ज़ेवर और नकदी है, वह ले लो।" किसी औरत की आंसू-भरी आवाज़ अपूर्व को सुन पड़ रही थी।

अपूर्व ने झोंपड़ी के भीतर झांककर देखा। एक नि:सहाय स्त्री तीन दैत्य-आकार के पुरुषों के पांवों के पास पड़ी गिड़गिड़ा रही थी। उन पुरुषों की आकृति बड़ी भयानक थी। दो के हाथों में लाठियां थीं जब कि तीसरे के हाथ में खंजर था जो दीये की मद्धिम रोशनी में भी चमक रहा था।

उन में से एक ने लड़के को पकड़ रखा था। लड़के की उम्र सोलह सत्रह वर्ष की थी। उसने अपनी हथेली से लड़के के मुंह को कसकर ढांप रखा था।

उन बदमाशों का अगुवा स्त्री के अनुनय-विनय पर ठठाकर हंसा और बोला, "सुनो, हमें तुम्हारे गहनों या नकदी में कोई दिलचस्पी नहीं है। हमारे पास पहले ही
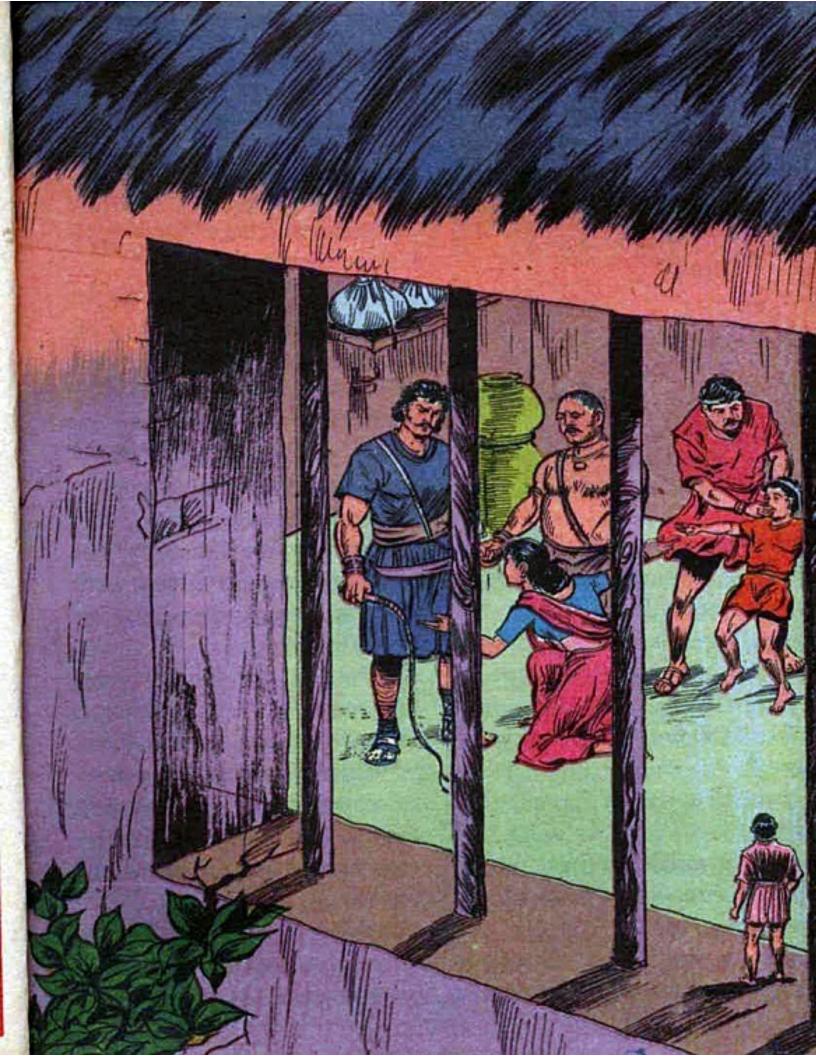
काफी कुछ है । हम केवल तुम्हारे बेटे को लेने आये हैं, क्योंकि इस में वे सभी गुण और लक्षण हैं जो देवता की बलि के लिए दरकार हैं । हम पिछले दो दिनों से छिपकर इसे देखते रहे हैं । तुम्हें तो इस पर गर्व होना चाहिए ।"

"क्यों नहीं, मुझे इस पर गर्व है । इसलिए मैं कैसे तुम्हें इसे ले जाने दूंगी ?" स्त्री ज़ोर से चिल्लायी ।

"तुम्हें इस बात पर गर्व होना चाहिए कि तुम्हारा बेटा बलि के लिए हर तरह से ठीक है । हमें तो वरदान मिलेगा ही, तुम्हें भी मिलेगा," अगुआ अपनी बात मानवाने की धुन में था ।

स्त्री इस बार चीत्कार कर उठी । बदमाशों में अब और सब्र नहीं था । वे उस स्त्री को आगाह करते हुए झोंपड़ी से बाहर आये और बोले, "अगर तुम चीखोगी और चिल्लाओगी तो हम तुम्हें खत्म कर देंगे । तुम जानती नहीं, मैं भैरव सरदार हूं । लोग मेरा नाम सुनकर कांपते हैं । अगर तुम अपना और अपने आदमी की खैरियत चाहती हो तो चुप हो जाओ ।"

यह कहकर वे झोंपड़ी से बाहर आये और जंगल की ओर बढ़ने लगे । उनके साथ बंदी बना हुआ वह लड़का भी था जिसे वे घसीटकर अपने साथ लिये जा रहे थे ।

स्त्री झोंपड़ी से बाहर आयी और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी, "मेरे बेटे को भैरव सरदार उठाकर ले गया है । अरे, मुआ डाकू! वह मेरे बेटे की अपने देवता पर बलि चढ़ायेगा । उन्होंने पहले मौका देख लिया था कि मेरा मर्द घर पर नहीं है । वह होता तो उनको ऐसे ही जाने न देता । बचाओ, बचाओ, गांववालो! मेरे बच्चे को बचाओ!"

उस स्त्री की चीख-चिल्लाहट सुनकर अड़ोस-पड़ोस के लोग अपनी-अपनी झोंपडियों से बाहर आये । उन्हें यह समझने में देर नहीं लगी कि उस स्त्री की कोख से जन्मे बच्चे को भैरव सरदार उठाकर ले जा रहा है जिस से उस मां का कलेजा तड़ता जा रहा है । लेकिन वे लाचारी में ऐसे ही टकटकी बांधे देखते रह गये ।

अपूर्व ने जान लिया कि गांववाले बालक को डाकुओं से बचा नहीं पायेंगे । वैसे भी उसे यह पता लगाने की कोई ज़रूरत न थी कि

गांववाले क्या कर सकते हैं और क्या नहीं । इसलिए उसने डाकुओं का पीछा करना ही ठीक समझा ।

वे डाकू पांच मील तक चलते रहे । आखिर वे पहाड़ियों से घिरी एक छोटी-सी घाटी में पहुंचे । घाटी के एक तरफ कई गुफाएं थीं, और उनके सामने एक गहरी खड्ड थी । एक बहुत बड़ी गुफा के सामने कई दस-बारह डाकू खड़े चौकन्नी बरतते हुए पहरा दे रहे थे ।

"हमें अपनी मनचाही चीज़ मिल गयी है । तुम्हारी तरफ से सब तैयार है?" सरदार ने आदेश के स्वर में प्रश्न किया ।

"बिलकुल तैयार, सरदार । ददुआ ने जंत्री भी देख ली है । बलि का समय आधी रात का निकला है," एक डाकू बोला ।

"शाबाश! अब इस बलि को देवता के बगलवाली गुफा में बंद कर दो । वह लो, वह हरी वाली नींद की दवाई देकर इसे नींद में सुला दो । हां, वह दवाई एक गिलास में थोड़ी-सी डालना । ज़्यादा डालोगे तो वह आधी रात के वक्त उठ नहीं पायेगा । कर्म-काण्ड पूरा करने के लिए ज़रूरी है कि वह बलि के समय जगा हो ।" सरदार ने अपना हुक्म सुनाते हुए कहा ।

अपूर्व ने देखा कि एक व्यक्ति गुफा में दाखिल हो रहा है और पानी के एक गिलास में किसी औषध का क़तरा डाल रहा है । फिर उस लड़के को मजबूर किया गया कि वह उसे पिये ।

"चाहे वह होश में हो या नहीं, उसकी टांगें

और हाथ बांधकर रखो । समझे न? बड़ी मुश्किल से इतनी तलाश करने के बाद हमें यह सही प्रकार का लड़का मिल पाया है । अगर यह दौड़ गया तो ।" भैरव सरदार कुछ कहता गया ।

उन डाकुओं में से एक डाकू ने भैरव सरदार को रोका और बोला, "दौड़ेगा अब कहां? उसे तो इस घाटी से बाहर निकलने का रास्ता भी मिल नहीं पायेगा!"

"बकवास बंद करो! जो मैं कहता हूं करो ।" ताव में आकर सरदार ने कड़ककर कहा ।

"आपका हुक्म सर-माथे पर, सरदार!" डाकू अपने अगुवा के सामने सर झुकाये खड़ा था ।

जहां वह बालक नींद में धुत्त पड़ा था । उसने उस बालक को ग़ौर से देखा । वह उससे आकार में कहीं बड़ा था । बेशक अपूर्व में इतना बल था कि वह चाहता तो हाथी भी उठा लेता, और उस बालक को उठा ले जाने में तो कोई समस्या ही न थी, लेकिन बालक को लिये-लिये वह उतनी गति नहीं पकड़ सकता था जिससे वह अदृश्य हो जाता । स्वाभाविक है कि डाकुओं को जैसे ही पता चलेगा कि बालक ग़ायब है, वे उसकी तलाश में चारों कोने छान मारेंगे और फिर दोनों को बंदी बना लेंगे । तब किया क्या जाये?

अपूर्व ने सुना कि डाकू खूब ज़ोर-ज़ोर से हंस रहे हैं । गुफा से बाहर आया तो उसने देखा कि वे अपने देवता के समक्ष बैठे हुए हैं । देवता क्या था, शार्दूल की एक मूर्ति थी । अपूर्व उसे देखकर कुछ-कुछ हंस दिया ।
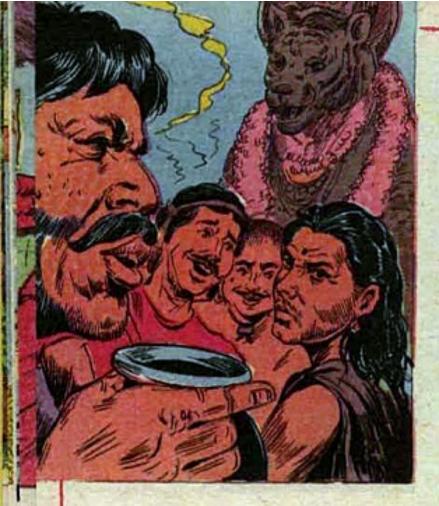
लड़के को गुफा के भीतर ले जाकर एक चटाई पर लिटा दिया गया । अपूर्व यह सब झाड़ियों में छिपा देख रहा था । उसे हिलने-डुलने से झाड़ियों में कुछ खड़खड़ाहट भी हुई । डाकू ने मुड़कर उधर देखा । "कैसी खड़खड़ाहट है यह!" उसे ताज्जुब हुआ । "होगा कोई खरगोश वगैरह!" उसके साथी ने उत्तर दिया ।

फिर दोनों उस आवाज़ को भूलकर अपने काम में लग गये । डाकू रात के उत्सव की तैयारियों में लगे हुए थे । अपूर्व ने अंधेरे का लाभ उठाया और वह एक जगह से दूसरी जगह रेंगता हुआ उनकी सब कारगुज़ारियां देखता रहा ।

फिर चुपके से वह उस गुफा में दाखिल हुआ

"ददुआ, खबरदार! तुम पुजारी हो । अगर तुम भी हमारी तरह चढ़ाओगे तो तुम्हारे हाथों की मज़बूती चली जायेगी । उन में कंपन आ जायेगा । तब तुम एक ही झटके में लड़के का सर धड़ से अलग नहीं कर पाओगे । और अगर तुम ऐसा न कर पाये तो समझ लो तुम्हारी भी चिंदी-चिंदी कर दूंगा!" डाकुओं का सरदार गरजा । "याद रखो । यह भैरवमल सरदार गलती करनेवाले को कभी नहीं बख्शता!" उसने आखिरी चेतावनी भी दे डाली ।

"सरदार, तुम चिंता मत करो! मैं बिलकुल नहीं पिऊंगा । तुम जितनी चाहो, चढ़ा

लो ।" और यह कहते हुए उसने शार्दूल की मूर्ति पर एक फूल रख दिया ।

एक तरफ एक बहुत बड़ा मर्तबान पड़ा था । एक डाकू ने उसमें एक गिलास डुबोया, शराब से उसे भरा और फिर वह शराब सब डाकुओं के प्यालों में बराबर-बराबर ढाल दी । प्याले पत्थर के थे ।

अपूर्व को एक तरकीब सूझी । वह उस गुफा में गया जहां वह हरा औषध पड़ा था । उसके पास ही एक सुराही रखी थी । उसने गिलास को उस औषध से भरा और उसे सुराही में उंडेल दिया । फिर वह एक चट्टान पर खड़ा हो गया और सुराही को उसने मर्तबान में पलट दिया । यह काम उसने दो बार और किया ।

जल्दी ही डाकुओं का दूसरा दौर चला । वे गटागट पी गये, पर पीते ही ऊंघते-से हो गये । जब शराब का तीसरा दौर चला तो वे सब-के-सब लुढ़क गये । लेकिन लुढ़के-लुढ़के भी वे हंसे जा रहे थे । फिर वह डाकू जो उनके गिलास में शराब ढ़ाल रहा था, खुद भी लुढ़क गया और वहीं का वहीं पड़ गया ।

"अरे, बलि का समय हुआ जा रहा है । बलिवाले लड़के को लाओ," ददुआ पुजारी डाकुओं को पुकार रहा था । लेकिन उसने जब देखा कि सब के सब चित पड़े हैं, तो वह हैरान रह गया ।

"यह क्या है? अरे, तुम सब को हुआ क्या है?" वह चिल्लाया । लेकिन कहीं से कोई उत्तर नहीं मिला ।

बंदी बालक की आंख खुल गयी थी अपूर्व ने अपनी अद्‌भुत शक्ति से वे सब रस्से काट डाले जो उस बालक को जकड़े हुए थे बालक भौंचक हुआ यह सब देख रहा था "यह ऐसे परेशान दिखने का समय नहीं है चलो, अभी-हमें एक और व्यक्ति से निबटना है ।" अपूर्व ने कहा । उसकी आवाज़ में जा था । बालक उसके पीछे-पीछे हो लिया ।

अपूर्व ने एक छुरा उठाया । वह उतना ही बड़ा था जितना कि वह स्वयं था । छुरा उस ददुआ पुजारी पर ताना और बालक को आदेश दिया कि वह उसे शराब का एक प्याला भेंट करे । "पियो, वरना अपनी मौत समझो!" अपूर्व ने उसे धमकाते हुए कहा

पुजारी के हाथ पांव फूल रहे थे । वह बुरी तरह चीख उठा । उसे पूरा विश्वास हो चुका था कि अपूर्व कोई जिन्न है । "पियो!" उस अपहृत बालक ने भी उसे आदेश दिया । पुजारी को मजबूर होकर शराब के प्याले को मुंह से लगाना पड़ा, और जैसे ही कुछ घूंट उसके भीतर गये, वह भी नींदा की चपेट में आने लगा और बाकी साथियों की तरह लुढ़क गया ।

"तुम्हारा नाम क्या है?" अपूर्व ने बालक से पूछा ।

"समीर!" बालक का उत्तर था ।

"चलो, जल्दी चलो ।" अपूर्व ने उसे सलाह देते हुए कहा । वे जल्दी-जल्दी चलने लगे और फिर दौड़ने लगे । बालक को विश्वास हो गया था कि अपूर्व कोई फरिश्ता है । अभी सुबह हो ही रही थी कि दोनों उस बालक के गांव में पहुंच गये । उधर गांववालों ने राजा की एक सैनिक टुकड़ी को रोक रखा था । वह टुकड़ी एक शहर के बाद दूसरे शहर की गश्त लगाती थी । गांववाले सैनिकों से बालक के उठाये जाने की बात कर ही रहे थे ।

"इन्हें बता दो कि वे अब उन डाकुओं के गिरोह को आसानी से पकड़ सकते हैं । वे दोपहर से पहले तो होश में आने से रहे," अपूर्व ने लड़के को सलाह दी और इसके साथ ही उसे "अलविदा!" कहता हुआ वहां से चल दिया ।

"ज़रा तो ठहरो!" समीर उससे मिन्नत कर रहा था । अपूर्व रुक गया । समीर की आँख में आंसू छलछला आये थे । "मैं तुम्हारे प्रति अपना आभार कैसे व्यक्त करूं!" समीर कह रहा था ।

"यदि आज तुम मौत के मुंह से बच निकले हो तो समझ लो कि जीवन में तुम्हें बहुत कुछ करना है । हां, यदि फिर तुम्हें कभी मेरी ज़रूरत पड़े तो मुझे पूरे मन से याद करना । मैं आ जाऊंगा । मेरा नाम अपूर्व है ।"

इतना कहकर अपूर्व वहां से ग़ायब हो गया । (जारी)

कोमल राजकुमारी

अपने इरादे के पक्के राजा विक्रम फिर उसी पेड़ के पास पहुँचे, पेड़ की शाखा से लटकती हुई लाश को उन्होंने अपने कंधे पर डाला और पहले की तरह चुप्पी साधे श्मशान की ओर चल पड़े । वह जैसे ही थोड़ा आगे बढ़े कि लाश में मौजूद बैताल बोल उठा, "राजन्, आपकी कोशिश हर बार बेकार जाती है, फिर भी आप अपने इरादे से टस से मस नहीं हो रहे । इससे मुझे थोड़ा अचंभा भी हो रहा है । पढ़े-लिखे होने और बुद्धि रखने के बावजूद कुछ लोग तर्क करने और कारण खोजने के मामले में अजब ढंग से व्यवहार करते हैं । मेरा ख्याल है कि आपका अपनी बात पर अड़े रहना और अजब ढंग से व्यवहार करना आपको उन्हीं लोगों में मिला देता है । उदाहरण के लिए मैं आपको विजयपुरी के राजकुमार की कहानी सुनाऊंगा । मैं चाहता हूँ कि आपका ध्यान

बैताल कथाएँ

टा रहे और आपको थकान महसूस न हो । सलिए यह कहानी पूरे मनोयोग से सुनिए ।" और बैताल ने वह कहानी सुनानी शुरू र दी:

विजयपुरी के राजा विद्याधर के लंबे समय क कोई संतान नहीं थी । काफी पूजा-पाठ ए, कई व्रत रखे गये, अनेक तीर्थ स्थलों के र्शन किये गये, तब कहीं रानी के माँ बनने ी उम्मीद हुई । आखिर, उसने दो जुड़वा च्चों को जन्म दिया, लेकिन साथ ही अपने ण भी छोड़ दिये । विद्याधर ने फिर विवाह रने की बात नहीं सोची । अपने दोनों पुत्रों, य और विजय, को बड़े लाड़-प्यार से लने में लग गया । जय, विजय से बड़ा । कुछ ही घड़ियों का अंतर था दोनों में । दोनों भाई जैसे-जैसे बड़े हुए, वैसे-वैसे विभिन्न विद्याओं में पारंगत होते गये ।

विद्याधर की उम्र ढल चुकी थी । उसका स्वास्थ्य भी गिरता जा रहा था । इसलिए उसने राजकीय कार्यों से छुटकारा पाना चाहा ।

राजा निर्णय नहीं ले पा रहा था कि सिंहासन पर किसे बैठाये । दोनों बेटे एक-समान योग्य थे । दोनों एक-दूसरे से आगे थे ।

राजा ने अपने विश्वास के सलाहकारों को बुलवाया और उनसे इस बारे में चर्चा की । प्रधान मंत्री का कहना था, "राजन्, दोनों राजकुमार सिंहासन पर बैठने की योग्यता रखते हैं, पर आप बड़े राजकुमार को ही सिंहासन पर बैठायें, क्योंकि यही न्यायसंगत होगा ।"

उसी दिन राजा ने अपने पुत्रों को बुलवाया और उनसे बोला, "मेरे प्यारे बेटो, मैं चाहता हूँ कि तुम दोनों का विवाह एकसाथ कर दूँ-वह भी अति शीघ्र, और जय का राजतिलक भी हो जाये । मेरा स्वास्थ्य भी दिन-ब-दिन बिगड़ता जा रहा है । मैं अपने राज्य के पर्वतीय प्रांतर में जाकर कुछ दिन विश्राम करना चाहता हूँ । इसलिए अड़ोस-पड़ोस के सभी राज्यों की राजकुमारियों के चित्र मंगवाये लेता हूँ, ताकि तुम अपनी-अपनी पसंद की राजकुमारी को चुन लो ।"

पिता की बात सुनकर बड़ा बेटा जय

बोला, "मुझे क्षमा करें, पिता जी। मेरे लिए चित्र मंगवाने की ज़रूरत नहीं। मैं अपने यहाँ के मुख्य शिल्पी की बेटी से शादी करना चाहता हूँ, क्योंकि मुझे उससे प्यार हो गया है।"

राजा विद्याधर बेटे की बात सुनकर भौंचक रह गया। फिर यह सोचकर चुप रहा कि यह बेटा अपनी धुन का पक्का है। वह अच्छी तरह जानता है कि जो एक बार इसने ठान ली, वह करके रहेगा।

इसलिए राजा दूसरे पुत्र से बोला, "तुम क्या कहना चाहते हो, बेटा?"

"मैं आपको आज नहीं बता सकता, पिताजी। मुझे कुछ वक्त चाहिए, कल तक की मोहलत दीजिए," और यह कहकर वह वहाँ से चला गया।

पर दूसरे दिन ही वह पिता से बोला, "मैं उस राजकुमारी से शादी करूँगा, जो संसार में सब से ज़्यादा कोमल हो। आप ऐसी राजकुमारियों के चित्र मंगवाइए।"

एक महीने के भीतर ही विजयपुरी में उन सभी राजकुमारियों के चित्र पहुँच गये जिन्हें सुकुमारी समझा जाता था। उनमें से भुवनगिरि, उदयगिरि और चंद्रगिरि की राजकुमारियों के चित्र अलग रखते हुए विजय बोला, "पिताजी, मैं इन तीन राजकुमारियों से स्वयं मिलना चाहता हूँ। मुझे उनसे कुछ प्रश्न करने होंगे। जिसे मैं योग्य पाऊंगा, उसे मैं आपकी दुल्हन बनाकर ले आऊंगा। आप संबंधित राज्यों को सूचना भिजवा

दीजिए कि मैं वहाँ की राजकुमारीयों से भेंट करने पहुँच रहा हूँ।"

यह बात राजा विद्याधर की समझ के बाहर थी कि विजय ने क्यों संसार की सब से कोमल राजकुमारी के साथ विवाह करना चाहा। वैसे यह भी राजा नहीं जानता कि ऐसी राजकुमारी को विजय किस ढंग से पहचान लेगा। फिर भी उसने विजय की इच्छा के अनुरूप उन तीनों देशों को यह समाचार भिजवा दिया कि शीघ्र विजय राजकुमारियों को देखने के लिए आ रहा है।

सब से पहले वह भुवनगिरि गया। भुवनगिरि का राजा, विजय को देखकर बहुत खुश हुआ। उसे अपने साथ राजभवन में ले गया और उसे अतिथि का सत्कार दिया।

फिर उसने अपनी बेटी को खबर भेजी कि वह तुरंत चली आये ।

कुछ ही देर बाद परिचारिका लौटी और उसने खबर देते हुए कहा, "क्षमा कीजए, महाराज! युवरानी अभी सो रही हैं । वास्तव में पिछली रात चंवर से एक मोरपंख टूटकर युवरानी के पलंग पर आ गिरा था जिसकी तरफ उनका ध्यान नहीं गया, पर उसके कारण वह रात भर सो भी नहीं सकीं और अब उनका शरीर पीड़ा से टूटा जा रहा था । अभी थोड़ी देर पहले ही उन्हें नींद आयी है । मुख्य परिचारिका ने बताया है कि युवरानी अब शाम को उठेंगी और तभी वह राजकुमार से मिलने आयेंगी ।"

खैर, शाम को युवरानी की राजकुमार विजय से भेंट हुई, और दोनों टहलने के लिए उद्यान में चले आये । टहलते समय विजय ने कहा, "अगर हमारी यह शादी तय हो जाती है तो तुम्हें शादीवाले दिन मेरी पसंद की नेले रंग की साड़ी पहननी पड़ेगी? क्या तुम्हें स्वीकार है?"

"नहीं, मेरा मनपसंद रंग लाल है । इसलिए मैं लाल रंग की साड़ी ही पहनूंगी, नीले रंग की साड़ी नहीं" युवरानी ने टका-सा उत्तर दिया ।

"विवाह की रस्म समाप्त होते ही पहले क्या मेरे पिताजी की पादवंदना करोगी या कि अपने पिता को प्रणाम करोगी?" विजय ने फिर प्रश्न किया ।

"अपने पिता को प्रणाम करूंगी ।"

"विवाह के भोज में पहले तुम मेरी पसंद का व्यंजन खाओगी या कुछ और खाना चाहोगी?" विजय ने एक और प्रश्न किया ।

"पहले मैं अपनी पसंद का पकवान खाऊंगी ।"

भुवनगिरी की राजकुमारी के उत्तर पाने के

बाद राजकुमार विजय ने अब उदयगिरि के लिए प्रस्थान किया । उदयगिरि में राजा तो केवल नाम के लिए था, असली राज तो वहां की रानी करती थी । उसने भी विजय का खूब सत्कार किया ।

पर काफी देर तक इंतज़ार करने के बाद भी वहां की राजकुमारी उससे भेंट करने नहीं आयी । विजय अब तंग आ चुका था । आखिर, उसने रानी से कहा, "क्या आप युवरानी को बुलवा सकती हैं?"

विजय का प्रश्न सुनकर रानी का चेहरा लटक गया । बोली, "शाम को ही बुलवा पाऊंगी, बेटे । सुबह स्नान के समय जब परिचारिकाएं मलाई में चंदन का लेप तैयार करके उसके बदन पर लगा रही थीं तो चंदन का कण उसके गाल पर घाव कर गया । इसलिए वैद्य की सलाह से अब वह विश्राम कर रही हैं । विश्राम कर लेने के बाद ही वह आ पायेगी ।"

खैर, शाम हुई तो राजकुमार विजय की उदयगिरि की राजकुमारी से भेंट हुई । उससे भी उस वही प्रश्न किये जो भुवनगिरि की राजकुमारी से किये थे । पहले प्रश्न का उत्तर उसे इस प्रकार मिला, "मैं आपकी मनपसंद नीली साड़ी ही पहनूंगी ।"

दूसरे प्रश्न के उत्तर में वह बोली, "पहले मैं आपके पिताजी की ही चरणवंदना करूंगी ।"

तीसरे प्रश्न के उत्तर में उसने कहा, "पहले मैं आपकी पसंद की चीज़ खाऊंगी । बाद में अपनी पसंद का कुछ खाऊंगी ।"

ये सभी उत्तर उसने लज्जा से सिकुड़ते हुए बड़े मधुर स्वर में दिये ।

अब विजय चंद्रगिरि के लिए रवाना हुआ । वहां भी उसका भव्य स्वागत हुआ । राजदंपति स्वयं आगे बढ़कर आये और विजय
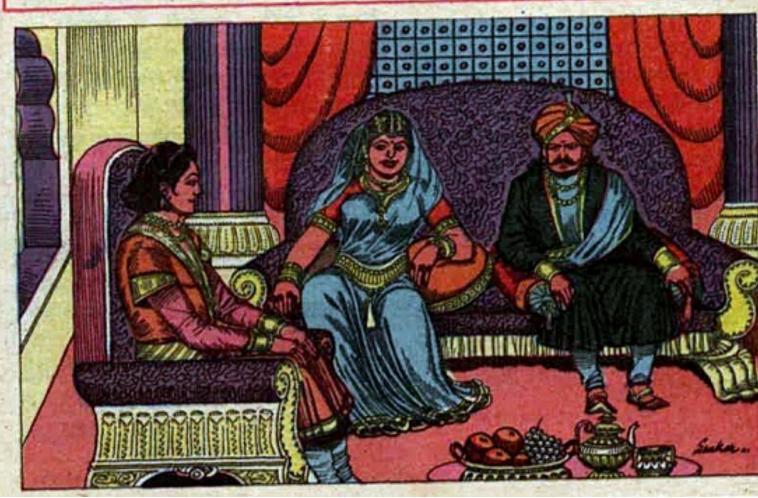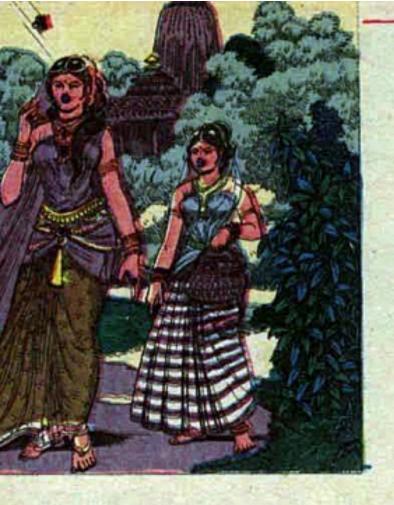
को राजभवन में ले गये ।

इससे पहले कि विजय राजकुमारी के बारे में कुछ पूछता, राजदंपति ने स्वयं ही कहा, "बेटा, बुरा नहीं मनाना । हमारी बेटी तुम से शाम को ही मिल पायेगी ।"

इस पर विजय को हंसी आ गयी । बोला, "शायद आप तिथि-नक्षत्र की देखकर चलते होंगे!"

"नहीं बेटा, ऐसी बात नहीं है । दरअसल, सुबह हमारी बेटी जब देवी के मंदिर से लौट रही थी तो हवा के झोंके से पारिजात का एक फूल उसके सर पर आ गिरा । तब से ही उसके सर में ज़ोरों का दर्द हो रहा है और वह दर्द से बेहाल है ।" रानी की आंखों में आंसू आ गये ।

शाम को विजय की राजकुमारी से उसके विशेष मंदिर में भेंट हुई । विजय ने तब उससे उन्हीं तीन प्रश्नों का उत्तर जानना चाहा ।

साड़ी के रंग के बारे में प्रश्न पूछे जाने पर राजकुमारी बोली, "रंग की मुझे कोई चिंता नहीं । मैं तो, बस, यह देखती हूं कि साड़ी हल्की से हल्की हो । क्योंकि साड़ी का वज़न मुझसे कतई बरदाश्त नहीं होता ।"

चरणवंदना की बात सुनकर राजकुमारी बोली, "झुक-झुक कर यदि मैं इस तरह चरणवंदना करती रही तो मेरी कमर ही टूट जायेगी । सब को एक ही बार हाथ जोड़कर नमस्कार कर लूंगी ।"

खाने का प्रसंग आने पर चंद्रगिरि की राजकुमारी बोली, "मेरे वश में कुछ नहीं । जो कुछ मुझे परिचारिकाएं खिला देंगी, खा लूंगी ।"

विजय अब अपने राज्य में लौटकर अपने पिता से बोला, "पिताजी, मैं चंद्रगिरि की राजकुमारी से शादी करना चाहता हूं । मैं ने पता लगा लिया कि वही संसार की सब से कोमल राजकुमारी है ।"

बैताल ने अपनी कहानी खत्म कर ली थी । कहानी खत्म कर चुका तो वह राजा विक्रम से बोला, "राजन्, कोई भी पुरुष अपनी होनेवाली पत्नी में विनयशीलता, बुद्धिमत्ता और सुंदरता खोजने की कोशिश करेगा । लेकिन उसका सुकोमल होना-क्या यह हास्यास्पद नहीं लगता? विजय के इस निर्णय के पीछे क्या कारण हो सकता? इस पर थोड़ा विचार करके मेरा संदेह दूर कीजिए, नहीं तो आपका सर फट जायेगा!"

इस पर राजा विक्रम बोले, "कुछ ही

घड़ियां और पल उम्र में छोटा रह जाने के कारण विजय को सिंहासन से वंचित रहना पड़ा। विजय का बड़ा भाई, जय, राजसिंहासन पर बैठने के साथ-साथ एक ऐसी लड़की से शादी करने जा रहा था जो सामान्य परिवार से थी। उसे राज-घराने की मर्यादा से कुछ लेना-देना नहीं रहा था। अब अगर ऐसी लड़की रानी या महारानी कहलाती है तो राजपरिवार से आने वाली विजय की पत्नी के मन में ज़रूर डाह पैदा होगी। इससे षड़यंत्र की संभावना भी पैदा हो सकती है। ऐसी स्थिति में विजय की पत्नी बनकर आनेवाली लड़की में कुछ ऐसी विशिष्टता रहनी चाहिए थी जिसे लेकर वह अपने पर गौरवान्वित होती रहती। तब उसे रानी न बन सकने का ग़म भी नहीं सताता। अपनी उस विशिष्टता से ही तृप्ति पा लेती। अब क्या यह कोई छोटी बात है कि कोई राजकुमारी संसार-भर की राजकुमारियों में सुकुमारी मानी जाये? अपना सर ऊंचा रखने के लिए उसके लिए यह भाव काफी है। फिर एक बात और भी सोचने की है—जिस राजकुमारी को बिलकुल हल्का और सुकोमल पारिजात का फूल ढोने से सरदर्द हो जायें वह राजकुमारी भला ताज का बोझ कैसे ढोयेगी? और फिर पूरे राज्य के राजपाट का बोझ अलग? विजय ने जब यह फैसला किया तो उसने पक्ष और विपक्ष पर अच्छी तरह विचार कर लिया था। यह उसने राज-परिवार की शांति के लिए किया था। वह राज्य में स्थिरता चाहता था। ऐसे व्यक्ति में हम कार्य-कारण के विवेक का अभाव या व्यावहारिक बुद्धि का अभाव नहीं कह सकते।"

राजा का इस प्रकार उत्तर देने से मौनभंग हो गया था। बैताल तो मौके की ताक में ही था। इस लिए वह तुरंत लाश के साथ वहाँ से अदृश्य हो गया और फिर उसी पेड़ की शाखा से जा लटका। (कल्पित)

[आधार: एम.आर. कामेश की रचना]

विचित्र रोग — विचित्र इलाज

कनकपुरी गाँव में बुद्धिशर्मा नाम का एक वैद्य था । वह वहाँ अपनी रोज़ी-रोटी की तलाश में आया था । उससे पहले उस गाँव में कोई वैद्य नहीं था । इसलिए लोग इलाज के लिए पड़ोस के गाँव में जाते । लेकिन जब से उन्होंने वैद्य बुद्धिशर्मा से इलाज करवाना शुरू किया, उन्हें और कहीं जाने की ज़रूरत नहीं पड़ी । बल्कि अकसर लोगों को यही कहते सुना गया कि बुद्धिशर्मा के हाथ में बहुत शफा है, और उसके इलाज करने का ढंग भी अपनी तरह का है ।

गाँव में माधव नाम का एक धनी रहता था । एक दिन उस धनी के पेट में दर्द होने लगा, और उसे मजबूरन वैद्य बुद्धिशर्मा के यहाँ जाना पड़ा । वहाँ पहुँचकर उसने उसे अपनी परेशानी बतायी ।

"यह दर्द कब से है?" वैद्य ने पूछा ।

"आज सुबह से । बहुत तीखा दर्द है । बरदाश्त नहीं हो पा रहा । इसीलिए इतनी कड़ी धूप में भी गाड़ी जुतवाक़र आया हूँ ।" माधव ने उत्तर दिया ।

"आज सुबह क्या खाया था?" वैद्य ने फिर पूछा ।

"चार रोटियाँ खायी थीं । शायद वे ठीक से पकी हुई नहीं थीं । उन्हीं के कारण यह दर्द हुआ होगा । पहले तो कभी ऐसा दर्द हुआ नहीं," माधव ने अपनी तरफ से सफाई दी ।

वैद्य बुद्धिशर्मा ने एक शीशी में माधव के लिए दवा तैयार की और उसे देते हुए बोला, "दो-तीन दिन इसे सुबह और शाम दो-दो बूंद अपनी आंखों में डालते रहो । बिलकुल ठीक हो जाओगे ।"

वैद्य की बात सुनकर माधव चकराया । बोला, "यह कैसा इलाज है । दर्द मेरे पेट में है और दवा आप आंख की दे रहे हैं?"

माधव के प्रश्न पर वैद्य बुद्धिशर्मा मुस्करा उठा । बोला, ठीक ही दवा दे रहा हूँ । गड़बड़ आपकी आंखें के साथ है । आंखें ठीक हो पायेंगी तो ऐसा दर्द भी कभी नहीं होगा । आंखें गड़बड़ थीं, तभी तो आप वे अधपकी रोटियाँ खा गये । और यह दर्द तो आपका अभी थोड़ी देर में चला जायेगा! आप चिंता न करें । बस, अपनी आंखों का ख्याल रखें ।"

—लक्ष्मीविद्या

उनके सपनों का भारत

सब से पहले—भारतीय

दादाभाई नौरोजी (१८२५-१९१७) बंबई के पारसी संप्रदाय के एक प्रमुख सदस्य थे, लेकिन वह समूचे भारत के एक महान नेता बन गये । वह पहले भारतीय थे जिन्हें इंगलैंड के हाउस ऑव कॉमन्स का सदस्य चुना गया । तीन बार—१८८६, १८९३ और फिर १९०६ में—उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया । उन्हीं की अध्यक्षता में कांग्रेस ने अपने १९०६ के कलकत्ता अधिवेशन में 'स्वराज' को अपना लक्ष्य घोषित किया ।

१८९३ में लाहौर में उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में अपने उद्‌गार इस प्रकार व्यक्त किये:

"हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि हम अपनी मातृभूमि की संतान हैं । वास्तव में मैंने इसके अलावा कि मैं भारतीय हूं और देश तथा देशवासियों के प्रति ही मैं कर्त्तव्यबद्ध हूं, और सोचा ही नहीं । चाहे मैं हिंदू हूं, या मुसलमान, या पारसी, या ईसाई या किसी और धर्म का मानने वाला, मैं सब से पहले भारतीय हूं । हमारा देश भारत है और हमारी राष्ट्रीयता भारतीय ।"

क्या तुम जानते हो?

१. संसार में सबसे बड़ा और सबसे भारी जानवर कौन-सा है?
२. सबसे लंबा जानवर कौन-सा है?
३. अब तक सबसे भारी पुरुष कौन रहा है?
४. उसका वज़न कितना था?
५. अब तक सबसे भारी महिला कौन रही है?
६. उसका वज़न कितना था?

(उत्तर पुष्ट ३६ पर)

कार्त्तिकेय

एक समय ऐसा आया जब असुर इतने शक्तिशाली हो गये कि देवताओं को अपने निवास छोड़कर भागना पड़ा। असुरों के नेता तारकासुर का आतंक और भी ज़्यादा था। वह किसी-की परवाह ही नहीं करता था, चाहे वह मानव हो या देवता। उसे, वास्तव में, ब्रह्मा से वर मिला हुआ था कि जिसकी आयु सात दिन से अधिक होगी, वह उसका वध नहीं कर सकेगा। अब सवाल ही कहां उठता है कि कोई सप्ताह-भर से कम आयु वाला उसके मुकाबले पर आता!

लेकिन एक बार ऐसा हुआ कि अग्नि को शिव से कुछ विशेष शक्ति प्राप्त हुई जिसे उसने गंगा के पवित्र जल में बहा दिया। गंगा उसे सारा की घाटी तक बहाये लिये गयी और वहीं उसे रख छोड़ा। वहां इस शक्ति ने एक सुंदर देव-बालक का रूप धारण किया। इस बालक को स्तनपान कराने के लिए छः कृत्तिकाएं या देवगुणवाली अप्सराएं आ पहुंची। उधर बालक ने छः मुंह धारण कर लिये ताकि

छ:ओं माताएं उसे एक ही समय स्तनपान करा सकें। इसी बालक का नाम कार्त्तिकेय पड़ा, क्योंकि इसका लालन-पालन कृत्तिकाओं ने किया था। इसे षण्मुख, षडानन भी कहा गया, क्योंकि इसके छेः मुख थे। इसके दूसरे नाम कुमार, स्कंद, सुब्रह्मण्य, गुह तथा सरवणा भी हैं।

शिव और पार्वती ने इसे अपना पुत्र मान लिया। इसे देवताओं का सेनापति नियुक्त किया गया। इसने असुरों को युद्ध में ललकारा और उन्हें बुरी तरह पराजित किया और कइयों को मौत के घाट उतारा। इसने कभी शादी नहीं की, क्योंकि इसे हर स्त्री में मां पार्वती नज़र आती थी।

चंदामामा की खबरें

एक निराली परंपरा

कर्नाटक राज्य में धारवाड़ के पास गदग नाम का एक छोटा-सा क्षेत्र है। वहां १९१४ में एक संगीतज्ञ ने एक संस्था स्थापित की थी। उस संगीतज्ञ का नाम पंचाक्षरी ग़नी था। वह बचपन से ही नेत्रहीन था। तब से उस संस्था में संगीतज्ञों की जितनी भी पीढ़ियां हुई हैं, उन में एक संगीतज्ञ नेत्रहीन ही रहा है। शिमोगा वेनुगोपाल भी जन्म से नेत्रहीन हैं। वह इधर की पीढ़ी के हैं। लेकिन ग़ज़ब के गायक हैं वह!

आशुलिपि में कीर्तिमान

लोकसभा आख्यापक (रिपोर्टर) हरीशचंद्र बिष्ट ने २९ वें अखिल भारतीय आशुलिपि प्रतियोगिता में तीसरे वर्ष लगातार एक मिनट में २५० शब्दों की गति बनाये रखकर एक नया कीर्तिमान कायम किया है।

२१ वर्षीय बिष्ट २५० शब्दों की गति तक पहुंचनेवाला सबसे कम उम्र का आशुलिपिक है। इससे पहले यह कीर्तिमान उसके पिता ने १९८० में कायम किया था।

आओ, साहित्य की दुनिया में विचरण करें

१. जब तुम उज्जैन, स्ट्रेटफोर्ड-अपॉन-अवोन, ट्रॉय, आयोध्या तथा मयलापुर के बारे में सोचते हो तो उनसे जुड़े तुम्हारे सामने किन रचनाकारों के नाम आते हैं?

२. वह कौन-सी कब्रगाह है जहां अधिकांश अंगरेज़ी रचनाकारों के मकबरे हैं?

३. भारतीय-आंग्ल (इंडो-एंगलियन) लेखक से अभिप्राय क्या है?

४. प्राचीन भारत में संस्कृत का वह कौन व्याकरण-रचयिता था जिसे महान माना जाता है?

५. उसका जीवन-काल क्या है और उसने किस ग्रंथ की रचना की?

उत्तर

सामान्य ज्ञान

१. नीली ह्वेल मछली (द ब्लू ह्वेल)

२. जिराफ ।

३. अमरीका का जोन ब्रोअर मिनोच (१९४१-८३)

४. ६३५ किलो ग्राम या १४०० पाउंड ।

५. अमरीका की पर्सी पर्ल (१९२६-७२)

६. ३९९ कि.ग्रा. या ८८० पाउंड ।

साहित्य

१. कालिदास, शेक्सपीयर, होमर, वाल्मीकि, तथा तिरुवल्लुवर ।

२. लंदन की वेस्टमिंस्टर एब्बे ।

३. वह भारतीय जो अंगरेज़ी में लिखता है ।

४. पाणिनी ।

५. चौथी शताब्दी ई.पू. या उससे भी पहले । उनके ग्रंथ का नाम है 'अष्टाध्यायी' ।

संसार की पौराणिक कथाएं–५

पर्सियस तथा आंद्रोमेदा

अर्गोस के राजा अक्रीसियस की एक बेटी थी जिसका नाम दानाई था। राजकुमारी दानाई का एक नन्हा बेटा भी था। अक्रीसियस ने उन दोनों को देश से निकाल बाहर किया, क्योंकि एक भविष्यवाणी हुई थी कि उसकी बेटी का बेटा उसका जानलेवा बनेगा।

समुद्र में तूफान उठा हुआ था। राजकुमारी और उसके बेटे को उसी समुद्र में धकेल दिया गया। समुद्र की लहरें तेज़ थीं। वे उनकी नाव को अपने साथ सेरिफोस द्वीप तक बहा ले गयी।

एक मछियारे को मां और बेटा समुद्र के किनारे पड़े मिले। वह उन्हें उस द्वीप के राजा के पास ले गया। राजा ने उनका खूब सत्कार किया, और एक मंदिर में उनके ठहरने के लिए जगह बना दी गयी।

वर्ष पर वर्ष बीतते गये । वह नन्हा बालक, जिसका नाम पर्सियस रखा गया था, अब एक बहादुर जवान दिखता था, यहां तक कि उसकी बहादुरी और जवानी देखकर द्वीप का राजा उससे इर्ष्या करने लगा था ।

एक दिन राजा ने पर्सियस को एक खास दावत पर आमंत्रित किया । उस दावत पर जो दूसरे राजकुमार आये थे, उन सब से उम्मीद की जाती थी कि वे अपने मेज़बान को एक-एक घोड़ा भेंट करेंगे । लेकिन पर्सियस के पास तो कोई घोड़ा नहीं था ।

इसलिए बाकी सब मेहमान उस पर हंसने लगे । "घोड़ा के अलावा मैं आपको और क्या भेंट कर सकता हूं?" पर्सियस ने अपने मेज़बान से पूछा । "मेदुसा का सर!" राजा का संक्षिप्त उत्तर था । मेदुसा एक राक्षसी थी । जो कोई भी उसकी आंखों की तरफ देखता, पत्थर बन जाता । फिर भी पर्सियस ने कसम खायी कि वह मेदुसा के सर को राजा के सामने तोहफे की शकल में पेश करेगा ।

पर्सियस का यह पता नहीं था कि मेदुसा कहां रहती है, लेकिन उसे यह पता था कि उसकी तीन बहनें कहां रहती हैं । उन सब की केवल एक आंख थी और एक ही दांत था जिन्हें वे एक बक्से में बंद रखती थीं और बारी-बारी से इस्तेमाल करती थीं । पर्सियस ने उस बक्से को छिपा दिया और उन्हें तभी लौटाया जब उन्होंने अपनी बहन, मेदुसा, का पता-ठिकाना बता दिया ।

पर्सियस ने देवताओं से प्रार्थना की और उन्होंने उसे विशेष शक्ति दे दी । शक्ति पाकर वह मेदुसा के पास पहुंचा और बजाय इसके कि वह उसकी तरफ देखता और पत्थर बन जाता, उसने उसकी प्रतिछाया को अपनी ढाल पर देखा ।

अलग किया । लेकिन उसका सर कटने से जो खून के कतरे बहे, वे सर्पों में बदलते गये । बहरहाल पर्सियस ने मेदुसा का सर अपने कब्ज़े में कर लिया और उसे लेकर द्वीप की ओर चल पड़ा । देवताओं ने उसकी कई प्रकार से सहायता की थी ।

इथियोपिया के सागर तट पर पहुंचा तो वहां उसे आंद्रोमेदा नाम की एक बहुत ही सुंदर युवती चट्टान से बंधी मिली । उसे एक समुद्री दैत्य खा जाने वाला था । दैत्य बहुत ही क्रूर था । आंद्रोमेदा के माता-पिता बिलकुल लाचार थे । वे किसी प्रकार भी उसे रोक पाने में असमर्थ थे ।

पर्सियस ने आव देखा न ताव, और समुद्र में कूद पड़ा और फिर उसने उस भयंकर दैत्य के दाहिने कंधे में अपना खंजर घोंप दिया । दैत्य बहुत बुरी तरह चिल्लाया, यहां तक कि उसकी चीख सुनकर कइयों का खून जमने को हो आया । बहरहाल, पर्सियस ने आंद्रोमेदा को मुक्त करा लिया ।

आंद्रोमेदा के जीवन-दान पा जाने पर उसके माता-पिता बहुत खुश थे । उन्होंने अपनी बेटी का विवाह पर्सियस से करने का निश्चय किया, और उसके लिए तैयारियां भी हो गयीं । चारों तरफ खुशियां ही खुशियां बिखरी हुई थीं ।

(अगले अंक में समाप्य)

यक्ष बार-बार क्यों हंसा

यक्षस्थल नाम के राज्य में एक किसान रहता था। उसका नाम नंदू था। नंदू एक संपन्न किसान था।

एक दिन सुबह-सुबह नंदू पशुओं को चारा-पानी कराकर अपने खेतों की ओर बढ़ रहा था। रास्ते में काफी झाड़-झंकाड़ थे। वहाँ उसे किसी के खर्राटे लेने की आवाज़ सुन पड़ी। वह उसी आवाज़ की ओर बढ़ा।

नंदू एक बड़े-से कुकुरमुत्ते के निकट पहुँचा तो वहाँ उसे एक अजीब-सा नाटे कद का व्यक्ति दीख पड़ा। वह कुकुरमुत्ते के डंठल से पीठ सटाये सो रहा था।

नंदू को समझते देर न लगी कि वह व्यक्ति और कोई नहीं, यक्ष ही है। उन दिनों यक्ष इंसानों से बोलते-चालते थे। ज़रूरत पड़ने पर अपनी अलौकिक शक्ति से उनकी कई तरह से मदद भी करते थे।

नंदू ने सोचा, यदि वह इस यक्ष को अपने काबू में कर ले तो उस की मदद से और धन-दौलत पा सकेगा। इसलिए वह चुपके से उसके निकट पहुँचा और उसने उसे एकदम अपने शिकंजे में कस लिया।

यक्ष गहरी नींद में था। अपने को इस तरह जकड़ा पाकर उसने अपनी आंखें खोलीं, नंदू को अपने सामने पाकर पूछा, "क्यों पकड़ा है तुमने मुझे? छोड़ दो मुझे!"

"बड़े भाग्य से तो मिले हो तुम मुझे! कैसे छोड़ दूँ तुम्हें? कोई खज़ाना दिलाओ मुझे।" नंदू ने इतराते हुए उत्तर दिया।

"मुझे स्वयं को नहीं पता कि खज़ाना कहाँ है!" यक्ष विक्षिप्त सा हो रहा था।

"मैं जानता हूँ तुम रास्ते पर कैसे आओगे! चलो, बताता हूँ, तुम्हें।" और नंदू उसे वैसे ही बंधा-बंधाया उठाकर अपने घर ले आया और लकड़ी के संदूक में उसे बंद कर दिया।

एक महीना ऐसे ही बीत गया। एक दिन

२५ वर्ष पूर्व चंदामामा में प्रकाशित कहानी

लौट रहा था तो उसे वहाँ एक बड़ा-सा लकड़ी का टुकड़ा मिला जोनंदू जंगल के रास्ते घर चारों ओर से अच्छी तरह तराशा हुआ था। उसने उसे अपने कंधे पर रखा और सीधा एक बढ़ई के पास पहुँचा। बढ़ई ने उसे उसके एवज़ में दो-चार रुपये दे दिये। रुपये लेकर वह सीधा अपने घर चला आया।

जैसे ही नंदू घर पहुँचा, संदूक में बंद यक्ष ज़ोर से हंसा। नंदू को बड़ा अचरज हुआ। बोला, "मैंने तो तुम्हें इस लिए बक्से में बंद किया था कि तुम्हारी अक्ल ठिकाने आ जायेगी। पर तुम तो ऊत के ऊत ही रहे। मुझे कोई खज़ाना दिलवा देते तो अब तक तुम कब के मुक्त हो गये होते। अब बेकार हंसने से क्या फायदा!"

यक्ष ने कोई उत्तर नहीं दिया। केवल हंसता ही रहा।

एक दिन नंदू के यहाँ एक मेहमान आया।

"भोजन करके जाते तो अच्छा रहता!" नंदू ने झूठ-मूठ की मेहमान-नवाज़ी दिखाते हुए कहा, "पर खाना तैयार होने में कुछ देर भी लग सकती है!"

मेहमान तो नंदू की चालाकी को समझता था। उसे उससे यही उम्मीद थी। बोला, "अरे, छोड़ो भोजन-वोजन को! मुझे अभी बहुत दूर जाना है।" और यह कहकर वह नंदू के यहाँ से चला आया। पर वह अभी मुश्किल से दस कदम ही बढ़ गया होगा कि एक बैल मचल पड़ा। उसने नंदू के मेहमान को अपने सींगों पर उठाकर दे पटका। फिर वह उसके एक पांव को कुचलते हुए वहाँ से गायब हो गया।

नंदू अब मजबूर था। उसे अपने मेहमान को अपने घर लाना ही पड़ा और उसका

दवा-दारू भी करवाना ही पड़ा। वह मेहमान नंदू के यहाँ एक महीने तक टिका रहा।

नंदू जब अपने जख्मी मेहमान को अपने यहाँ लाया था, तो संदूक में बंद यक्ष तब भी ज़ोर-ज़ोर से हंसा था।

एक महीना और बीत गया। नंदू को एक दिन कुछ खरीदारी करनी थी जिसके लिए उसे हाट जाना था। उसने अपना सारा धन ज़मीन में दबाकर रखा हुआ था। उन दिनों लोग अपना धन इसी तरह ज़मीन में दबाकर रखते थे। नंदू ने ज़मीन खोदी और उसमें से एक घड़ा निकाला। घड़े में काफी धन-दौलत थी। नंदू ने उसमें से कुछ रकम निकाली और फिर उसे वापस ज़मीन में दबा दिया। फिर वह हाट की ओर चल दिया।

जिस वक्त नंदू ने अपनी धन-दौलत वाला घड़ा ज़मीन से निकाला था, उस वक्त उस पर कोई आंख रखे हुए था। इसलिए जैसे ही नंदू घर से निकलकर हाट की ओर बढ़ा, वैसे ही उसने ज़मीन के उस हिस्से को फिर से खोदा और उसमें छिपाकर रखे घड़े में से तमाम दौलत लेकर चंपत हो गया।

नंदू शाम को जब हाट से घर लौटा तो संदूक में बंद यक्ष फिर ठठाकर हंसा। इस पर नंदू को बहुत गुस्सा आया। उसने संदूक का ताला खोला और यक्ष को झटके से बाहर निकाला। फिर वह यक्ष से बोला, "ग़ज़ब के जीव हो तुम! दो महीनों से इस बक्से में बंद हो, लेकिन अपनी हेकड़ी नहीं छोड़ते। और तो और, तीन बार तुम मुझ पर हंसे हो। क्यों? मुझे इसका कारण चाहिए।"

"तो सुनो," यक्ष बोला, "जब तुम्हें जंगल में अच्छी तरह तराशा हुआ लकड़ी का एक
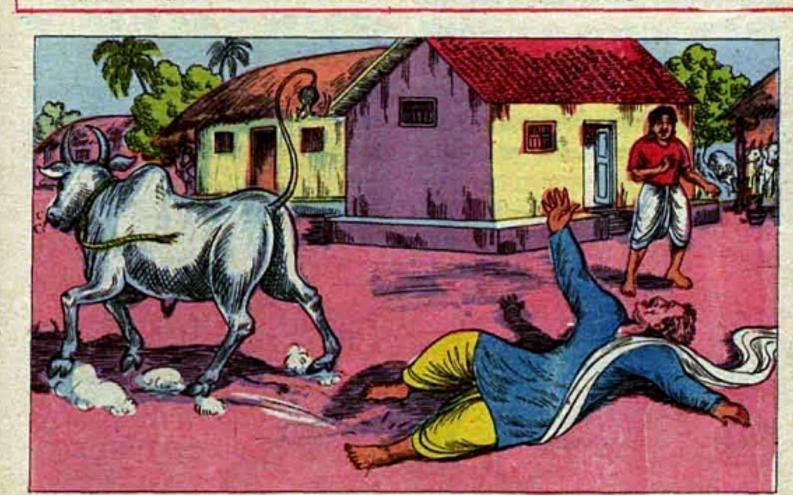
बड़ा-सा टुकड़ा मिला तो तुमने उसे बढ़ई के हाथों चंद रुपयों के लिए बेच दिया । उस टुकड़े में लाखों रुपये की कीमत का सोना और हीरे-मोती थे । उसी लकड़ी के टुकड़े की बदौलत वह बढ़ई मालामाल हो गया । और अब अपनी ज़िंदगी ठाठ से गुज़ार रहा है । उसी दिन पहली बार मुझे हंसी आयी थी । समझे अब?"

नंदू यक्ष की बात सुनकर सन्न रह गया । फिर अपने को संभालते हुए बोला, "दूसरी बार तुम क्यों हंसे? तब तो मेरे मेहमान का पैर कुचला गया था और उसे काफी चोटें आयी थीं!"

"तब भी तुमने बुद्धिहीनता का परिचय दिया," यक्ष ने उत्तर दिया । "तुम्हारा वह मेहमान बहुत दूर से आया था । उसे तुमने अगर भोजन खिलाया होता और उसका ठीक से सत्कार किया होता तो उसे इस तरह चोटें न आतीं और न ही तुम्हारा उस पर इतना खर्च आता । एक वक्त के भोजन के लिए तुमने कंजूसी दिखायी और फिर पूरे एक महीने तक भुगतते रहे । खिलाया-पिलाया अलग, और दवा-दारू पर जो खर्च आया वह अलग । मुझे इस सब का पहले ही भान था । इसलिए मैं उस समय हंसा था ।"

"चलो, वह तो माना, पर अब क्यों हंस रहे थे?" नंदू गुस्से से पागल हुआ जा रहा था ।

"क्योंकि मुझे तुम्हारी मूर्खता का पूरा परिचय मिल गया था । तुमने जब अपना ज़मीन में दबाया हुआ धन निकाला तो उस समय तुमने सावधानी नहीं बरती । एक चोर तुम्हारी ताक में था । उसने तुम्हारा भेद जान लिया । तुम जैसे ही हाट के लिए रवाना हुए, उसने वैसे ही ज़मीन का वह हिस्सा खोदा और उस में से तुम्हारा सारा धन निकालकर नौ दो ग्यारह हो गया ।" यक्ष ने उत्तर दिया ।

"यह तुम क्या कह रहे हो? क्या मेरा सारा धन चोरी हो गया है?" नंदू पर जैसे कि गाज गिरी । वह चीख उठा और वहाँ से उस कमरे की ओर लपका जहाँ उसने अपना धन दबाया हुआ था । वहाँ अब खाली घड़े के और कुछ भी नहीं था । नंदू पूरी तरह लुट चुका था ।

नंदू अब विलाप-सा करता हुआ वापस उसी कमरे में आया जहाँ उसने यक्ष को छोड़ा था । पर अब तो यक्ष भी वहाँ से जा चुका था ।

मैनाक पर्वत ने जब हनुमान को सादर उसका आतिथ्य स्वीकार करने का आग्रह किया तो हनुमान ने बड़े संतोष का अनुभव किया और बोला, "तुम्हारा मेरे प्रति यह भाव ही तुम्हारा आतिथ्य है । तुम्हारी बात मैं इस समय स्वीकार नहीं कर पा रहा । तुम बुरा नहीं मानना । इस समय ज़रा भी विलंब हुआ तो समझ लो हमारा सोचा हुआ सब धरा का धरा रह जायेगा । दूसरे, मैंने अपने साथियों को वचन दिया था कि मैं सूर्यास्त से पहले ही लंका पहुंच जाऊंगा । इसलिए मेरा कहीं भी रुकना हमारे लिए घातक हो सकता है ।"

यह कहकर हनुमान ने मैनाक को अपने हाथ का स्पर्श दिया और थोड़ी और ऊंची उड़ान भरकर उसी आकाश-मार्ग से आगे बढ़ गया ।

"तुम अपने उद्देश्य में सफल रहो, " मैनाक ने हनुमान को आशीर्वाद दिया । सागर ने भी उसे आशीर्वाद दिया । लेकिन तब तक हनुमान काफी आगे बढ़ चुका था ।

मैनाक और हनुमान के बीच होनेवाले इस प्रसंग को देवगण, ऋषिगण, सिद्ध पुरुष और देवेंद्र, सभी देख रहे थे । वे मन ही मन मैनाक की प्रशंसा किये बिना न रहे सके । फिर उनके मन में विचार आया, "यह हनुमान ही था जिसने मैनाक का आतिथ्य स्वीकार न करने का साहस किया । कोई और होता तो

११. सागर का पार करना

पर्वतशरीरधारी राक्षसी का रूप धारण कर लो, और अपनी बड़ी-बड़ी दाढ़ों और गोरोचन के रंग की आंखों से उसका रास्ता रोको । हम यह देखना चाहते हैं कि वह तुम्हें कैसे लांघता है । क्या वह तुम्हें निरस्त्र करेगा या तुमसे भयभीत होकर लौट जायेगा?"

देवताओं से आदेश पाकर सर्पों की जननी सुरसा ने भयानक रूप धारण कर लिया । वह बड़ी विशाल और विकृत दिख रही थी । हनुमान् जैसे ही वहां से गुज़रने को हुआ, उसने उसका रास्ता रोक लिया और बोली, "तुम मुझे देवताओं से भोजन के रूप में प्राप्त हुआ हो । इसलिए मैं अब तुम्हें खाऊंगी । तुम मेरे मुंह के भीतर चले जाओ ।" और उसने अपना मुंह पूरा खोल दिया ।

हनुमान् ने सुरसा की बात सुनी । अपने चेहरे पर भरपूर संतोष लाकर और विनीत भाव से वह बोला, "दशरथ-पुत्र राम अपने छोटे भाई लक्ष्मण और पत्नी सीता के साथ दण्डकारण्य में आये थे । उन्हें किसी काम से अपनी कुटिया से बाहर जाना पड़ा । इतने में उनकी पत्नी सीता को रावण छल से उठाकर ले गया । राम बहुत विचलित हैं । मैं उनका दूत बनकर सीता की खोज में निकला हूं । इस पुनीत कार्य में तुम भी मेरी मदद करो । मैं अपना काम जब पूरा कर लूंगा तो स्वयं ही तुम्हारे मुंह में चला आऊंगा । मेरा विश्वास करो ।"

सुरसा नहीं मानी । वह हनुमान से बोली, "मुझे पार करके कोई नहीं जा सकता । ऐसा मुझे वरदान मिला हुआ है ।"

इतना साहस न जुटा पाता!"

फिर देवेंद्र मैनाक से बोले, "मैनाक, तुम्हें देखकर मैं बहुत खुश हूं । भविष्य में तुम्हें मेरी ओर से कोई खतरा नहीं होगा । तुम निश्चिंत रहो ।"

देवेंद्र की बात सुनकर मैनाक आश्वस्त हुआ । उसने राहत की सांस ली ।

इस बीच हनुमान अपने गंतव्य की ओर काफी आगे बढ़ गया था । उस समय जाने क्यों देवगण, गंधर्व आदि में यह इच्छा जगी कि हनुमान की शक्ति की परीक्षा की जाये । बस, तुरंत वे सर्पों की जननी सुरसा के पास पहुंचे और उससे बोले, "वायुपुत्र हनुमान, जिसे महावीर भी कहते हैं, सागर पर से उड़ता हुआ कहीं जा रहा है । हम चाहते हैं कि तुम

सुरसा का मुंह अब तक खुला ही था । खुला मुंह एक बड़ी गुफा के समान लग रहा था । हनुमान ने अपने को घटाकर एकदम छोटा कर लिया । फिर वह बड़े वेग से उसके मुंह में दाखिल हुआ और वहां से बाहर भी आ गया और बोला, "हे दक्ष-पुत्री! तुम मेरा नमस्कार स्वीकार करो । मैं तुम्हारे मुंह में दाखिल हुआ था और फिर वहां से बाहर भी आ गया हूं । अब मुझे सीता की खोज में जाने दो ।"

सुरसा ने फौरन राक्षसी का रूप त्याग दिया और अपने असली रूप में आ गयी और बोली, "हनुमान, जाओ, अब तुम्हें कोई नहीं रोक सकेगा । जाओ, तुम्हारे कार्य में तुम्हें सफलता मिलेगी । तुम सीता और राम को आपस में मिलाने में सफल रहोगे ।"

सुरसा से उसकी शुभकामनाएं लेकर हनुमान आगे बढ़ने को ही था कि उसे सिंहिका नाम की एक और राक्षसी ने रोका । वह सागर में ही रहती थी । उसे लगा, यह उसके लिए बढ़िया आहार रहेगा । वह किसी की परछाई पर ही अपनी आंखें गड़ाकर उसे अपनी ओर खींच लेती थी ।

उसने हनुमान पर भी वही वार चलाया । हनुमान को लगा जैसे कि वह तूफान के थपेड़े खा रहा कोई जहाज़ हो । उसने हैरान होकर ऊपर-नीचे देखा । फिर नीचे उसे सागर में एक महाकाय जीव दीख पड़ा । वह पानी पर तैर रहा था । सुग्रीव ने पहले ही उसे ऐसे जीवों के प्रति आगाह कर दिया था । उसने कहा था कि दक्षिणी छोर के सागर में एक अद्भुत शक्तिवाला जीव रहता है जो किसी को उसकी परछाई से ही अपनी ओर खींच लेता है । हनुमान को विश्वास हो गया कि यह वही जीव है । उसने अपने शरीर को बढ़ाना शुरू कर दिया । सिंहिका ने भी अपने मुंह को हनुमान के बढ़ते शरीर के अनुपात में और बड़ा कर लिया और उसे निगल जाने की कोशिश करने लगी ।

हनुमान सिंहिका की क्षमता समझ गया था । उसने अब अपने आपको एकदम छोटा कर लिया और पीछा सिंहिका के मुंह में घुस गया और घुसता ही चला गया, जब तक कि सिंहिका की छाती फटने नहीं लगी, और वह फटी छाती से बाहर नहीं आ गया । बाहर आकर उसने फिर अपने शरीर को पहले की

तरह बड़ा कर लिया और फिर उड़ान भरने को हुआ । तब उसने देखा कि सिंहिका निर्जीव होकर पानी पर तिर रही थी ।

हनुमान अब अपनी राह पर आगे बढ़ा । अब उसे सागर-पार की दृश्यावली दिखाई देने लगी थी । वहां पर घने जंगल थे । उसे लंकाद्वीप, मलय पर्वत और उसके वन, नदियों के सागर में मिलने के स्थल, सब अच्छी तरह दिखाई दे रहे थे ।

अचानक हनुमान के मन में एक विचार आया । यदि राक्षस उसे उसके इस बृहदाकार और वेगवान शरीर के साथ देख लेंगे तो बना-बनाया खेल चौपट हो जायेगा । इसलिए उसने अपने शरीर को फिर घटाकर छोटा कर लिया और सागर किनारे एक पर्वत की चोटी पर खड़ा होकर लंका को ग़ौर से देखने लगा । लंका उसे बहुत ही सुंदर दिखाई दे रही थी, ठीक देवेंद्र की अमरावती की तरह ।

वास्तव में लंका नगरी त्रिकूट शिखर पर स्थित थी । जिस समय वह उसकी ओर बढ़ रहा था, उसे कई प्रकार की दृश्यावली दीख पड़ी । कहीं फूलों से लदे, घने पेड़ोंवाले पर्वत-शिखर और कहीं उद्यान और तरह-तरह के मीठी सुगंध बिखेरते, रंग-बिरंगे फूल और पौधे, फिर चहचहाते पक्षी, नदी-नाले । सब जैसे कि उसके भीतर बसते जा रहे थे ।

लंका नगरी के चारों ओर गहरी खाइयां थीं । वे पानी से लबालब भरी हुई थीं और उन में हर कहीं कमल और कुईं के फूल खिल रहे थे । खाइयों के परे नगरी का परकोटा था जो सोने का था । चप्पे-चप्पे पर राक्षसों का पहरा था ताकि कोई दुश्मन नगरी में प्रवेश न पा सके । परकोटे के पीछे झांकती ऊंची ऊंची, सफेद रंग की अट्टालिकाएं थीं, किले के बुर्ज थे और उनपर लहराते झंडे थे । अट्टालिकाओं के बीच से होकर जाते खुले मार्ग थे । त्रिकूट शिखर से लंका नगरी ऐसे दिख रही थी जैसे कि वह आकाश में निर्मित हो । ऐसी सुंदर नगरी को विश्वकर्मा को छोड़ और कौन बना सकता था!

हनुमान् धीरे से लंका नगरी के उत्तरी द्वार पर पहुँचा और यह अनुमान लगाने लगा कि रावण का दल-बल कितना होगा । वह

दु:साध्य है, तब उनका पराक्रम क्या करेगा? राक्षस वैसे भी बड़े क्रूर होते हैं । शांतिपूर्ण ढंग से उन्हें जीतना तो संभव है ही नहीं । संपत्ति उनके पास पहले ही अपार है । उन पर किसी प्रकार का प्रलोभन भी नहीं चलेगा । वे इतने एकजुट हैं कि उन्हें कोई आपस में फोड़ भी नहीं सकता । बल तो उनके पास है ही । तब कौन-सा उपाय काम में आ सकता है? फिर सागर पार करने की शक्ति और किस में है? उसके अपने अलावा अंगद, नील और सुग्रीव में ही । तब यहाँ कितनी सेना पहुँच सकेगी?

हनुमान, इसी उधेड़बुन में था कि उसे ध्यान आया—यह सब सोचना बेमानी है । पहले तो यह पता लगाना चाहिए कि सीता यहाँ है भी कि नहीं, और अगर है तो किस रूप में है? यदि वह जीवित हो, तभी आगे की कार्रवाई की जा सकती है, वरना यह सोचना-करना बिलकुल निरर्थक होगा ।

समझ गया था कि इस महानगरी को जीतना आसान नहीं होगा । तब कौन इसे सहज रूप से जीत सकता है? किसी समय यह महानगरी कुबेर की नगरी कहलाती थी । अब तो कुबेर भी यहाँ प्रवेश नहीं पा सकेगा! प्रहरी राक्षस किसी गुफा की रक्षा करते सर्पों की तरह दीख पड़ रहे थे । फिर सागर तो था ही, जिसकी विशालता किसी के लिए भी चुनौती हो सकती थी । तब वानर इसे कैसे पार करेंगे? यदि वे यहाँ तक किसी तरह पहुँच भी गये, तब वे क्या इस महानगरी पर विजय पा सकेंगे? यहाँ तो देवताओं की भी टें बोल जाये । यह तो उनके भी बल-बूते का नहीं । तब राम क्या कर लेंगे, चाहे वह कितने भी पराक्रमी हों? जब यहाँ प्रवेश पाना ही

हनुमान् की पहली समस्या थी लंका नगरी में प्रवेश पाने की । यदि वह अपना विशाल रूप बनाये रखता है तो फौरन राक्षसों की नज़र में आ जायेगा । और यदि वह अपने को बहुत छोटा कर लेता है तो उसे नगरी में घूमने में और उसका जायज़ा लेने में बहुत समय लगेगा । आखिर, उसने अपने को सामान्य रूप में कर लिया ताकि न वह बहुत बड़ा लगे और न ही बहुत छोटा । वह अब तमाम रात लंका नगरी में घूमना चाहता था । पर वह यह भी नहीं चाहता था कि सीता को ढूंढ़

निकालने से पहले वह राक्षसों के हत्थे चढ़ जाये । राक्षसों के हत्थे चढ़ गया तो वे सीधे उसे रावण के सामने ही ला पटकेंगे और रावण में शायद इतनी शिष्टता नहीं होगी कि वह उसे राम का दूत मानकर उसके साथ दूतोचित व्यवहार करे ।

इसलिए जब तक सूरज नहीं डूबा, हनुमान प्रतीक्षा करता रहा । फिर उसने अपने शरीर को सिकोड़ा और बिल्ली के समान हो गया । कुछ ही देर बाद वह एक साधारण बंदर में परिवर्तित हो गया और उसी की तरह उछलता-कूदता हुआ लंका नगरी में घूमने लगा ।

लंका के सभी रास्ते सुंदर थे । गलियाँ भी ढंग से बनी-संवरी हुई थीं । वहाँ के मकान महलों की तरह दीख पड़ रहे थे । उनके खंभे सोने और चांदी के थे । खिड़कियों के पल्लों पर सोने का मुलम्मा चढ़ा हुआ था । ज़्यादातर इमारतें सात आठ मंज़िली थीं । नगरी में हर कहीं स्फटिक और मणियों के अलंकरण दिख रहे थे । वह नगरी गंधर्व नगरी के समान दिखाई दे रही थी । लेकिन उसे एक पल के लिए फिर वही चिंता सता गयी कि इतने भयानक राक्षसों से वानर कैसे मुकाबला कर पायेंगे! हाँ, उसे इस बात का संतोष भी था कि वह सीता को खोजने निकला हुआ है ।

इतने में चंद्रमा भी उदय हो गया । लंका नगरी ने अब एक भयानक स्त्री का रूप धारण कर लिया था । वह हनुमान के सामने एकाएक तनकर खड़ी हो गयी और बोली, "कौन हो तुम? यहाँ क्यों आये हो? तुम जैसे

वानर को इस नगरी में घुसने किसने दिया?"

हनुमान् का उत्तर संक्षिप्त था, "तुम जो जानना चाह रही हो, वह मैं तुम्हें बिना हीलोहुज्जत बता दूंगा । पर पहले मुझे यह बताओ कि तुम कौन हो? इस तरह मेरा रास्ता रोककर मुझ से ऐसी उद्दड़ता क्यों बरत रही हो?"

"मैं महापराक्रमी रावण की सेविका हूँ । उसी की आज्ञा से मैं यहाँ आयी हूँ और लंका नगरी की रक्षा कर रही हूँ । मुझे पराजित करके ही तुम आगे बढ़ सकते हो । पर मुझे पराजित करना हर किसी के बस का नहीं । मैं अभी तुम्हारा काम तमाम किये देती हूं । मेरा नाम लंका है । अब तुम बताओ, तुम कौन हो?" लंका गुस्से से भरी हुई थी ।

"मेरे मन में इच्छा थी कि एक बार लंकानगरी देखूं । इसी लिए यहाँ चला आया।" हनुमान ने फिर संक्षिप्त-सा उत्तर दिया।

"पर लंका नगरी देखने से पहले तुम्हें मुझे हराना होगा," लंका के तेवर पहले की तरह चढ़े हुए थे ।

"मुझे यह सुंदर नगरी देख लेने दो । मैं स्वयं ही यहाँ से चला जाऊंगा," हनुमान ने अनुरोध किया ।

लंका कहाँ मानने वाली थी । उसने भयंकर रूप से चीखकर हनुमान पर अपने हाथ से प्रहार कर दिया । हनुमान भी पीछे रहने वाला नहीं था । उसने भी उतने ही ज़ोर से चीखकर अपने बायें हाथ की मुट्ठी से उस पर प्रहार किया । मुट्ठी का लगना था कि लंका लुढ़ककर आहत पक्षी की तरह ज़मीन पर गिर पड़ी और छटपटाने लगी । फिर वह ज़ोर-ज़ोर से चीखने लगी, "मुझे मत मारो । तुम जैसा चाहो करो । मैं मानती हूँ कि तुम बड़े बलशाली हो । मुझ से ब्रह्मदेव ने कहा था कि जब कोई वानर मुझे पराजित कर देगा तो राक्षसों पर विपत्ति टूटनी शुरू हो जायेगी । अब मैं इस विपत्ति का कारण समझ रही हूँ—रावण ने सीता का जो अपहरण किया था, उसी का परिणाम हमें मिलने वाला है ।"

हनुमान ने जब नगरी में प्रवेश किया था, तो उसने एक शत्रु के समान प्राचीर से कूदकर किया था । प्रवेश करते समय उसने अपना बायाँ पांव पहले भीतर रखा था । राजमार्ग पर उसे कहीं संगीत वाद्यों की ध्वनि और कहीं मानव-जन की किलकारियाँ सुन पड़ रही थीं । हर अट्टालिका एक से बढ़कर एक ऊंची थी । सभी पुष्पमालाओं से अलंकृत और अतिसुंदर दिखाई दे रही थीं । स्त्रियाँ मद्यपान करके ऊंचे, नीचे और मध्यम स्तर पर गान करने में व्यस्त थीं । किन्हीं घरों से वेद-पाठ भी सुनाई दे रहा था । कहीं-कहीं राक्षसों के चीखने की आवाज़ सुन पड़ रही थी ।

"निस्संदेह, इस लंका नगरी में प्रवेश पाना आसान नहीं, पर मैं इस नगरी में अब प्रवेश पा चुका हूँ," मन ही मन सोचकर हनुमान का सीना गर्व से फूला जा रहा था । (जारी)

महापंडित कौन?
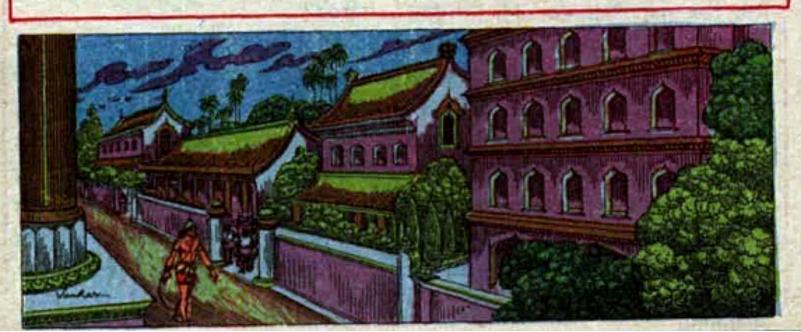
सीतापुर गांव में माधव नाम का एक अमीर आदमी रहता था। उस का एक ही बेटा था जिसका नाम विद्याधर था। वह एक अच्छा-खासा विद्वान था। खेतीबाड़ी या व्यापार के प्रति उसकी बिलकुल रुचि न थी।

लेकिन एक तरफ तो विद्याधर ज़्यादा से ज़्यादा विद्यार्जन कर लेना चाहता था, और दूसरी तरफ उसमें अहंकार की मात्र बढ़ती जा रही थी। घर के चाहे नौकर-चाकर हों या कर्ज़ लेने आये ग़रीब किसान, या फिर सीतापुर के अनपढ़-गंवार, विद्याधर उन्हें नीचा दिखाते हुए उनकी खिल्ली उड़ाता।

कई बार माधव ने विद्याधर को समझाने की कोशिश की कि उसक यह रवैया ठीक नहीं है, पर विद्याधर के रवैये में कोई अंतर नहीं आया।

एक दिन माधव उससे बोला, "बेटे, तुम्हारे इस रवैये के कारण यदि समूचा गांव हमारे खिलाफ हो गया तो हमें सर छिपाने को जगह नहीं मिलेगी।"

पिता की बात सुनकर माधव हंस पड़ा। बोला, "पिताजी, मैं ऐसा मूर्ख नहीं हूं। हमारे गांव के सब से धनी लोग हैं कनकगुप्त, रत्नसेन और मोतीराम। मैंने इन तीनों से दोस्ती कर ली है। पटेल महानंद और गांव का सब से तगड़ा पहलवान भीम मुझ पर अपनी जान छिड़कते हैं। इसलिए हमें किसी से डरने की ज़रूरत नहीं।"

विद्याधर की दलील पर माधव बोला, "तुम उनका ज़िक्र कर रहे हो! वे महाबदमाश हैं! लोगों को नाहक सताते हैं और उसी से खुश होते रहते हैं। तुम ऐसे लोगों से कब तक नाता बनाये रखते हो!"

विद्याधर पिता की बात सुनकर खीझ उठा, बोला, "पिताजी, वे चाहे महाबदमाश

वंदना चतुर्वेदी

हों या महागुंडे, गांव का कोई भी आदमी उनकी तरफ आंख उठाकर नहीं देख सकता । वे पांचों अगर चाहें, तो हमें भी नुकसान पहुंचा सकते हैं । इसीलिए मैंने उनसे दोस्ती की है । उन्हें खुश रखने के लिए ही मैं बाकी लोगों की खिल्ली उड़ाता हूं ।"

माधव को यह समझते देर नहीं लगी कि विद्याधर दुष्टों के हत्थे चढ़ गया है और स्वयं भी दुष्ट बनता जा रहा है ।

उन्हीं दिनों माधव का मित्र प्रबोध उनके यहां कुछ दिन रहने आया हुआ था । दो दिनों में ही उसे माधव के पुत्र, विद्याधर, की चाल-ढाल समझ में आ गयी । उसने माधव से कहा, "देखो मित्र, मैं सोच रहा हूं कि अपनी बड़ी बेटी की तुम्हारे बेटे से शादी कर दूं । विद्याधर में सब गुण हैं, पर अहंकार भी उस पर हावी हो गया है । उसे गंगानगर के पंडित विष्णुशर्मा के यहां एक बार भेज दो, सब ठीक हो जायेगा" ।

माधव भी चाहता था कि उसके बेटे विद्याधर का अहंकार ठीक हो । इसलिए वह उसे गंगानगर भेजने को तैयार हो गया । अपने बेटे को बुलाकर उसने कहा, "गंगानगर में विष्णुशर्मा नाम का एक पंडित है । उसे बहुत बड़ा पंडित माना जाता है । तुम यदि अपनी विद्वत्ता से उसे हरा दोगे तो हमारे गांव का नाम बहुत हो जायेगा ।"

विद्याधर को तो ऐसा अवसर चाहिए ही था जिससे उसके अहंकार की तुष्टि होती । इसलिए वह तुरंत मान गया और गंगानगर जा पहुंचा । विष्णुशर्मा से जब उसकी भेंट हुई तो वह हैरत में पड़ गया ।

विद्याधर तो बड़ी तड़क-भड़क वाला था । खैर, विष्णुशर्मा उससे बड़े स्नेह से मिला और थोड़ी-सी बातचीत के बाद ही ताड़ गया कि विद्याधर का असली मकसद क्या है । फिर उसे कुरेदने के इरादे से बोला, "वाह, क्या बात है! कैसी गज़ब की रौनक है तुम्हारे चेहरे पर! साफ पता चलता है कि तुम एक महान पंडित हो । बताओ, तुमने कौन-कौन-से ग्रंथ पढ़े हैं! मुझे जानकर बड़ी खुशी होगी । शायद इससे कुछ मुझे भी लाभ पहुंचे!"

विद्याधर तो शेख़ी में था ही । उसने कुछ ग्रंथों के नाम उगल दिये ।

"अरे, इतना सब कुछ पढ़ा है तुमने!

तुम्हारे मुकाबले पर तो कोई ठहर ही नहीं सकता । मैं स्वयं भी शायद नहीं ठहर पाऊं । मैंने मान लिया कि तुम महान हो । अब तुम कुछ दिन मेरे यहां रुको । तुम से मैं और भी बहुत कुछ सीखना चाहता हूं ।" विष्णुशर्मा ने विनम्र भाव से कहा ।

"नहीं, मैं आप से सहमत नहीं हूं । बिना किसी प्रकार की स्पर्धा के मुझे यह जीत स्वीकार नहीं । स्पर्धा में यदि मैं हार भी जाता हूं तो मुझे खुशी होगी । इसलिए हमें शास्त्रार्थ करना ही होगा ।" विद्याधर ने ज़िद पकड़ते हुए कहा ।

"ठीक है, ऐसे ही सही," विष्णुशर्मा ने अपनी वही विनम्रता बनाये रखते हुए कहा, "तुम चार दिन मेरे यहां रुको । पांचवें दिन हम शहर चलेंगे । वहां ज़मींदार जगन्नाथ के यहां दरबारी पंडित के लिए प्रतियोगिता होने जा रही है । उसके लिए मुझे निमंत्रण मिला है । मेरे साथ तुम भी उस प्रतियोगिता में भाग लेना । इस तरह तुम्हारी स्पर्धा करने की इच्छा भी पूरी हो जायेगी ।" विष्णुशर्मा ने उत्तर दिया ।

विष्णुशर्मा से उचित उत्तर पाकर विद्याधर खुश हो गया । यह तो बहुत बढ़िया मौका रहेगा, उसने मन ही मन सोचा । विष्णुशर्मा को तो हराऊंगा भी, दूसरे पंडितों को भी चित कर दूंगा । इसकी चारों ओर लोग मेरा ही गुणगान करेंगे और मेरी प्रतिभा को सराहेंगे ।

विष्णुशर्मा के यहां विद्याधर चार दिन

रुका । विष्णुशर्मा की पत्नी ने उसे ऐसा स्नेह दिया जैसे कि वह उसका छोटा भाई हो । वह उसे बढ़िया से बढ़िया पकवान खिलाती । विष्णुशर्मा के दो बेटे थे । दोनों ही बहुत छोटे थे । पर विद्याधर की वे भी खूब सेवा करते । घर में पूरे अनुशासन का वातावरण था । विष्णुशर्मा और विद्याधर रोज़ साहित्य पर चर्चा करते ।

विद्याधर अब धीरे-धीरे समझने लगा था कि विष्णुशर्मा विद्याधर की किसी दलील का खंडन नहीं करता था । इससे विद्याधर को एक और गुमान हुआ— हो सकता है विष्णुशर्मा की विद्वत्ता उथली हो । इसलिए शायद वह तर्क-वितर्क करने से कतराता है!

विष्णुशर्मा की एक और बात विद्याधर की

समझ में नहीं आयी । एक दिन विष्णुशर्मा के यहां एक किसान आया । वह अपने साथ बहुत सी साग-भाजी लाया था । उसे विष्णुशर्मा की ओर बढ़ाते हुए बोला, "पंडित जी, ये सब्ज़ियां मेरे खेत में तैयार हुई हैं । यदि ये आपके यहां पककर आपके भोजन को स्वादिष्ट बना सकें तो मैं अपने को धन्य मानूंगा ।"

किसान की बात सुनकर विष्णुशर्मा हंस पड़ा और बोला, "विद्या से आदमी का पेट नहीं भर सकता । तुम जैसे अन्न की पूर्ति करने वालों से ही लोगों का पेट भरता है और उनकी जान बचती है । तुम तो हर किसी से महान हो– सब प्राणियों के सृजनकर्ता ईश्वर से भी । हमारी तो बिसात ही क्या है!" फिर बोला, "अन्नदाता, सुखी भव!" और इस प्रकार उसकी प्रशंसा करते हुए उसे विदाई दी ।

विष्णुशर्मा के यहां कुछ और लेग भी आये । वे भी बहुत साधारण और अदना-से थे । लेकिन विष्णुशर्मा ने उन सब को यथायोग्य सम्मान दिया और अपने यहां से विदा किया । बेशक, विद्याधर को वह पसंद नहीं आया ।

होते-होते चार दिन भी बीत गये और अब उनका शहर के लिए रवाना होने का समय आ गया । समूचा सामान दो गठरियों में बांधा गया । गठरियां भारी थीं । उन्हें पहले नदी तक पहुंचाना था । पर उन्हें ढोने वाला कोई न था । जो मज़दूर उनके यहां ऐसे मौके पर मदद करता था, वह बीमार था । खैर, उसने अपनी जगह किसी और मज़दूर को भेज दिया । यह मज़दूर चिड़चिड़े स्वभाव का था । दोनों गठरियां अपने सर पर रखने से पहले खूब कुड़कुड़ाया । विष्णुशर्मा चुप रहा । आखिर, वह गठरियां उठाये-उठाये आगे-आगे चलने लगा । और विष्णुशर्मा तथा विद्याधर उसके पीछे-पीछे चलने लगे ।

नदी किनारे पहुंचकर नाव से नदी को पार करना था । मज़दूर बहुत धीरे-धीरे चल रहा था । विष्णुशर्मा को डर था कि कहीं नाव छूट न जाये । इस लिए उसने मज़दूर से थोड़ा तेज़ चलने को कहा ।

मज़दूर तो चिड़चिड़े स्वभाव का था ही । झट से विष्णुशर्मा पर चढ़ बैठा । बोला, "धूप देख रहे हो कितनी तेज़ है! ज़रा अपने सर पर गठरियां रखकर चलो तो पता चले कि सर पर

बोझ ढोना क्या मानी रखता है!"

"बोल तो ऐसे रहा है जैसे मुफ्त में यह बोझ ढो रहा हो! अकड़ तो देखो इसकी! दो कौड़ी का आदमी और ऐसा ठसका!" विद्याधर अपना मुहं खोलने से रह न सका ।

विष्णुशर्मा स्थिति की नज़ाकत समझता था । उसने मज़दूर का गुस्सा शांत करते हुए कहा, "वाकई, यह काम बहुत मुश्किल है । किसी ऐरा-गैरा के बूते का नहीं । पर हमें डर यह भी है कि देर हो गयी तो नाव छूट जायेगी और तुम्हारा-हमारा श्रम सब बेकार जायेगा । यदि हमारे शब्द तुम्हें अच्छे नहीं लगे तो मुझे क्षमा कर दो । तुम वैसे ही चलो जैसा तुम्हें ठीक लगता है । हमारे भाग्य में यदि नाव का मिलना बदा है तो ज़रूर मिलेगी ।"

न जाने क्या सोचकर मज़दूर जल्दी-जल्दी चलने लगा जिससे वे वक्त पर नाव को पकड़ सके ।

नाविक ने विष्णुशर्मा को देखा तो झट हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और प्रार्थी स्वर में बोला, "मुझे पता चल गया था कि आप आ रहे हैं । इसलिए मैं ने नाव को रोके रखा । श्रीराम केलिए जैसे केवट ने प्रतीक्षा की थी, मैं भी वैसे ही आपके लिए प्रतिक्षा कर रहा था । आइए, पधारिए!"

"ऐसी बातें कहकर मुझे लज्जित मत करो । मैं तुम्हारे सामने कुछ भी नहीं हूं । मेरी विद्या तुम्हारी विद्या के सामने कहीं नहीं ठहरती ।" और विष्णुशर्मा ने उस नाविक
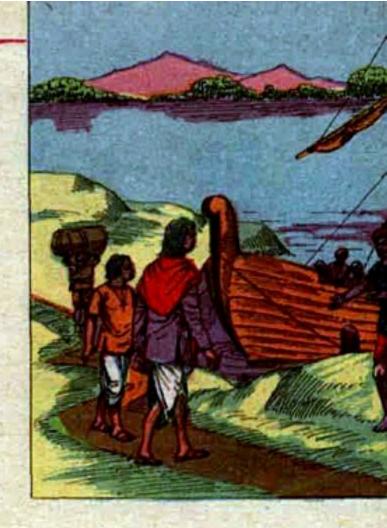
की ढेरों प्रशंसा कर डाली । फिर विद्याधर के साथ उसकी नाव में जा बैठा ।

जिस तरह से विष्णुशर्मा ने नाविक की प्रशंसा की थी, विद्याधर को वह भी पसंद नहीं आयी । फिर जब वे नाव में बैठ गये, तो विष्णुशर्मा नाव में बैठे अन्य लोगों से विद्याधर की प्रशंसा करते हुए बोला, "यह नौजवान बहुत बड़ा पंडित है! मुझ से भी बड़ा ।"

नाव जब शहर के निकट पहुंची तो वहां ज़मींदार जगन्नाथ का दीवान विष्णुशर्मा को लिवाने आया हुआ था । नाव घाट पर लगी तो वह आगे बढ़कर बोला, "पंडितजी, ज़मींदार महोदय स्वयं आपको लिवाने आनेवाले थे, पर किन्हीं कामों में उलझे होने के कारण आ न सके । अब समूचे प्रबंध का
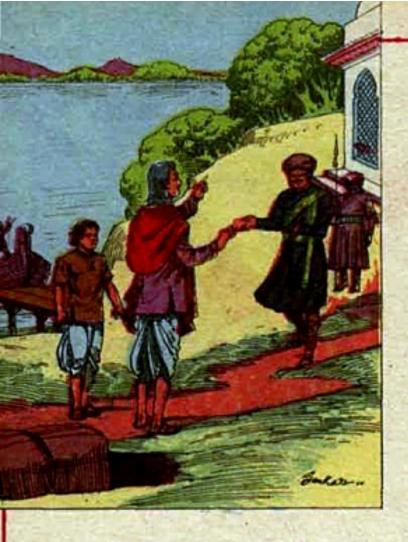
दयित्व उन्होंने मुझ पर छोड़ दिया है। आपको उनके लिए आशीर्वाद मेरे माध्यम से भेजना होगा।"

दीवान की बात पर विष्णुशर्मा हंस दिया, फिर बोला, "देखिए दीवानजी, मेरी जगह यदि राजा इस नाव से आता तो ज़मींदार सब काम छोड़कर उसकी अगवानी करने स्वयं आता। बेकार की ये बातें किसलिए, दीवान जी? पंड़ितों और विद्वत्तोका आदार करने की परंपरा राजा भोज और आंध्र भोज तक ही सीमित रह गयी। बाघ की खाल ओढ़कर क्या कोई सियार बाघ बन सका है? मैं जानता हूं ज़मींदार जगन्नाथ इत्रों की खुशबू में डूबा हुआ होगा। भला मुझ जैसे गरीब ब्राह्मण की अगवानी करने वह स्वयं क्यों आता! लेकिन एक बात उसे ज़रूर बता देना, यदि वह मेरा आशीर्वाद वाकई चाहता है तो उसे मेरे पास आना ही होगा।"

विष्णुशर्मा की बातें सुनकर दीवान अपना सा मुंह लेकर रह गया। विद्याधर ने तो सब कुछ सुना ही था। वह विष्णुशर्मा के साहस पर चौंक उठा। उसने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि विष्णुशर्मा में अहं की कोई मात्रा है। यह सब देखकर वह घबरा गया। उसे डर लग रहा था कि जाने क्या हो जाये। दीवान ने चूं तक न की और चुपके से उनके रहने की व्यवस्था करके ज़मींदार को खबर करने चला गया। थोडी देर के बाद ही ज़मींदार स्वयं वहां आया और विष्णुशर्मा से क्षमा-याचना करने लगा।

विष्णुशर्मा बिलकुल चुप रहा। उसने केवल अपना सर थोड़ा-सा हिला दिया। ज़मींदार के चले जाने के बाद विद्याधर ने आश्चर्य से भर कर विष्णुशर्मा से कहा, "जिन साधारण लोगों ने आपकी प्रशंसा की, आपने भी उनकी प्रशंसा की। एक मज़दूर ने अजब ढंग से आपसे व्यवहार किया, लेकिन उसकी बात का बुरा मनाये बगैर आपने उससे भी क्षमा मांगी। तब ज़मींदार के प्रति आपका व्यवहार ऐसा क्यों रहा? यहां जो प्रतियोगिता होनेवाली है, उसमें आपको शायद हार दिख रही होगी। इसीलिए आप इस तरह का व्यवहार कर रहे हैं!"

इस पर विष्णुशर्मा ने अपना सर कुछ दूसरी तरह हिलाया और बोला, "पंडित को

चाहिए कि अपने से छोटे और कमज़ोर लोगों का वह मान करे, और जो अपने से बड़े हों, अपने हाथ में सत्ता रखते हों और बहुत-कुछ कर सकने का सामर्थ्य रखते हों, उनके प्रति पंडित के लिए अहंकार इस्तेमाल करना ज़रूरी है । इसीसे वे तुम्हारी बात सुनते हैं । मैंने भी यही किया ।"

"मुझे यह बात स्पष्ट नहीं हुई । थोड़े और विस्तार से बताइए ।" विद्याधर ने फिर प्रश्न किया ।

"अपनी विद्वत्ता से जब कोई पंडित सत्ताधारी लोगों को काबू में रख सके तो समझो वह महान् पंडित है । यहां होनेवाली प्रतियोगिता में मैं विनय से नहीं, केवल विद्वत्ता के बल पर जीतना चाहता हूं । ज़मींदार के प्रति यदि मैं विनयशील रहा और मैंने यह प्रतियोगिता जीत भी ली तो मुझे संतोष नहीं होगा । अपनी विद्वत्ता के बल पर जब मैं जीतना चाहता हूं तो मुझे ऐसे ही करना होगा । है कि नहीं?" विष्णुशर्मा अब विद्याधर से प्रश्न करते हुए बोला ।

विष्णुशर्मा की बत सुनकर विद्याधर को अपनी पहले की बातें याद हो आयीं । वह अपने में लज्जित महसूस करने लगा । दुर्बलों का नहीं, बलवानों का सामना करनेवाला पंडित सही मानों में पंडित है—यह बात उसके भीतर गहरे पैठ गयी । विष्णुशर्मा ने विद्याधर को बराबर मान-सम्मान दिया । इसका अर्थ तो यह हुआ कि विष्णुशर्मा उसे हमेशा अपने से छोटा मानता रहा ।

अब विद्याधर में प्रतियोगिता में हिस्सा लेने की हिम्मत न रही थी । वह चुपके से विष्णुशर्मा से अनुमति लेकर वहां से अपने घर के लिए लौट पड़ा । अपने गांव में पहुंचा तो उसके रवैये में बहुत अंतर था । वह अब अपने से छोटों का खूब सत्कार कर रहा था और अपने से बड़ों से थोड़ा डटकर बात कर रहा था ।

विद्याधर की विद्वान होने की ख्याति अब धीरे-धीरे चारों ओर फैलती जा रही थी । उसे अब महापंडित समझा जाने लगा था । इसलिए प्रतियोगता में हिस्सा लेने के लिए उसे भी ज़मींदार के यहां से निमंत्रण आने लगे ।

सदाशयी कैपांग
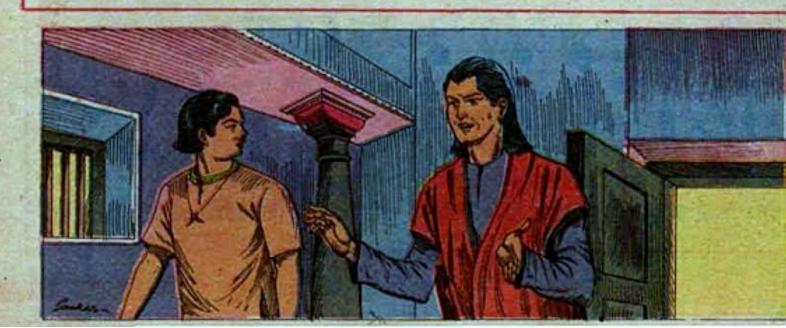
किसी गांव में एक बहुत गरीब किसान रहता था । किसान के तीन बेटे थे । पहले दो बेटे तो बुद्धिमान माने जाते थे, पर तीसरे बेटे को दोनों बड़े भाई निर्बुद्धि मानते थे और उसे उसी नाम से पुकारते थे । इस तीसरे बेटे का नाम कैपांग था । वह हर समय कुछ-न-कुछ सोचता हुआ दीख पड़ता । काम करने की गति भी उसकी बहुत मंद थी । हमेशा वह पीछे रह जाता । चाल-ढाल भी उसकी अजब थी । इससे उसका पिता भी चिंतित रहता । उसे भी यह विश्वास हो चला था कि उसका तीसरा बेटा कैपांग बिलकुल बेवकूफ और नाकारा है ।

लेकिन कैपांग के रंग ही न्यारे थे । उसे अपने गांव के दीन-दुखियों की ही पड़ी रहती और उन्हीं की चिंता से वह छटपटाता रहता और उनके दुख दूर करने के उपाय सोचता । अगर किसी की भेड़-बकरी गुम हो जाती तो वह तब तक सांस न लेता जब तक उसे ढूंढ़कर उसके मालिक तक पहुँचा न देता ।

बड़े भाई कैपांग की इन हरकतों को भला कहाँ बरदाश्त करने वाले थे । उन्हें तो केवल कोई बहाना चाहिए था । बस, बहाना मिला और उन्होंने उसे घर से बाहर कर दिया । पिता लाचार । सब कुछ सह गया ।

कैपांग अब सड़क का आदमी बन गया था । वह यायावरों की तरह इधर-उधर घूमता रहता । जहाँ जो कुछ मिला, खा लिया । कभी-कभी पूरी फ़ाक़ा-कशी की नौबत भी आ जाती ।

इसी तरह दिन कट रहे थे । एक गांव में रहते हुए उसे पता चला कि किसी पहाड़ी गुफा में एक पहुँचे हुए महात्मा रहते हैं जिनके पास अद्भुत शक्ति है । वह उन्हीं की तलाश में चल पड़ा । गांव के बाद गांव पार करता गया । एक गांव में पहुंचा तो वहाँ

मंगोल लोक कथा

भयंकर अकाल पड़ा हुआ था, और वहाँ के लोग एवं पशु-पक्षी, सब पानी के अभाव में तड़प-तड़पकर दम तोड़ रहे थे। उसने अपने मन ही मन तय कर लिया था कि जैसे ही उसकी भेंट उस महात्मा से होगी, वह सबसे पहले उनसे इस गांव की हालत सुधारने के लिए प्रार्थना करेगा।

कैपांग आगे बढ़ रहा था। रास्ते में एक छोटा-सा गांव आया। गांव के छोर पर एक झोंपड़ी थी जिसमें एक गरीब औरत रह रही थी। उसकी एक बेटी भी थी जो बहुत सुंदर, मगर जन्म से अंधी थी। उसने तय किया कि महात्मा से विनती करके उस लड़की की आंखों की रोशनी भी वापस करवायेगा।

काफी दिनों तक चलते रहने के बाद आखिर कैपांग उस महात्मा की गुफा तक पहुँच ही गया। महात्मा को पता चल गया था कि कैपांग किस उद्देश्य से उन तक पहुँचना चाह रहा है। उसकी सद्भावना पर उन्हें खुशी हुई। उन्होंने उसे वे सब युक्तियाँ बता दीं जिनसे उसके सोचे हुए सभी काम अपने आप पूरे हो जायें। कैपांग अब वहाँ से लौट पड़ा। पहले वह उस गांव में पहुँचा जहाँ पानी के अभाव में अकाल पड़ा हुआ था, और लोग तिल-तिल मर रहे थे। फिर वह उस झरने की तलाश में निकला जिसका पानी सूख जाने के कारण वह गावं अकाल की चपेट में आ गया था। काफी दूर जाने के बाद उसे एक ऊंची पहाड़ी से पतली सी जल-धारा नीचे गिरती हुई दिखाई दी।
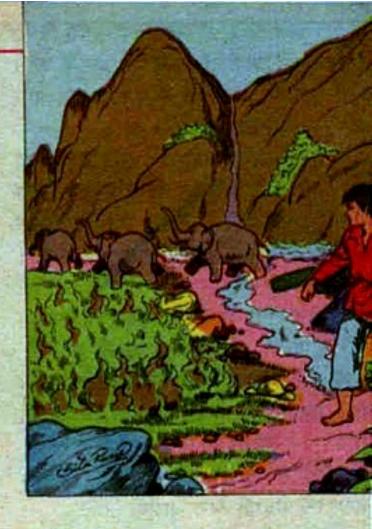
पहाड़ी से बहकर जहां से पानी उस गांव की ओर जाता था, वहां अनेक हाथी उस प्रपात के बहाव को रोकते हुए लेटे हुए थे, और इसी वजह से पहाड़ी के झरने में पानी बहुत कम रहा गया था।

कैपांग ने उन हाथियों को वहां से खदेड़ने की कोशिश की। उसने कई तरह की आवाज़ें की, पर वे वहां से टस से मस न हुए। फिर उसने बहुत सारी सूखी लकड़ियां इकट्ठी की और चकमक की मदद से उन्हें आग लगा दी। लकड़ियों के ढेर ने तुरंत ऊंची-ऊंची लपटों की शकल ले ली।

अब वहां आग देखकर हाथी घबरा गये और वहां से भाग खड़े हुए। हाथियों का वहां

से हटना था कि पानी अपने पूरे ज़ोर से बहने लगा। पानी के अभाव में तड़पते उस गांव का शाप जैसे कि मिट गया था।

कैपांग अब उस गांव की ओर बढ़ा जहां वह अंधी सुंदर लड़की थी। कैपांग बिना हिचके उस लड़की के निकट गया और उसने अपने दोनों हाथ उस के सिर पर रख दिये। उन हाथों का स्पर्श पाकर अंधी लड़की की आंखों में रोशनी आ गयी। वह खुशी से चीख उठी, "मां, मां, मैं अब देख सकती हूं!"

मां-बेटी, दोनों की खुशी का ठिकाना न था। महात्मा ने कैपांग से कहा था कि जो व्यक्ति उस लड़की का पति बननेवाला होगा, वही जब उसके सर को छुएगा तो उसकी आंखों को रोशनी मिल जायेगी।

उस लड़की की कैपांग के साथ फौरन शादी कर दी गयी। दोनों को उस औरत ने आशीर्वाद दिया और फिर विदाई दे दी।

कैपांग अपनी पत्नी के साथ अपने गांव लौट आया। उसके सद्कार्यों की चारों ओर पहले ही धूम मच चुकी थी। इसलिए जब वह अपने गांव लौटा तो लोगों ने उसका खूब सत्कार किया।

कैपांग का किसान बाप अपने बड़े बेटों को डांटते हुए बोला, "शर्म करो, कुछ शर्म करो। तुम्हारा सगा भाई है वह! अपने ऐसे व्यवहार पर तुम्हें चुल्लूभर पानी में डूब मरना चाहिए। आज तक तुम उसे निर्बुद्धि कहते रहे। तुमने इसी बात की आड लेकर उसे घर से बाहर किया। इस पर भी तुम्हें संतोष नहीं हुआ। तुम अन्याय पर अन्याय किये जा रहे हो। तुम्हारे जैसा स्वार्थी और अहंकारी मैंने कभी नहीं देखा। वह साफ है। एकदम निर्मल है। तुम्हें उसे गले लगाना चाहिए।"

बाप से जब खूब जमकर फटकार मिली तो बड़े भाइयों की अक्ल ठिकाने आयी। बापने उस सदाशयी बेटे को खूब प्यार किया। उसकी पत्नी को भी उसने जी भर कर स्नेह दिया। कैपांग अब पहले की तरह लोगों की भलाई के काम में लग गया था।

श्रेष्ठ आरोही

लंबे सींगोंवाली भेड़ें पहाड़ों की ऊंची-सीधी, सभी प्रकार की चढ़ाई आसानी से पार कर जाती हैं । इसका क्या कारण है? दरअसल, उन भेड़ों के खुरों के किनारे चाहे नुकीले होते हैं, पर वे भीतर से मुड़े हुए मुलायम तलवों से जुड़े होते हैं । इस बनावट की वजह से इनकी पकड़ सपाट चट्टानों पर भी मजबूत रहती है, क्योंकि ये उनसे चिपक-से जाते हैं ।

लैपार्ड जैको

लैपार्ड जैको नाम की छिपकली की मोटी पूंछ उसके बड़े काम की होती है । उसमें आहार और जल तो जमा रहता ही है, कोई खतरा आने पर यह पूंछ उसकी आत्म-रक्षा में अपने आप अलग हो जाती है । और फिर बहुत जल्दी ही पहली पूंछ-की जगह दूसरी पूंछ उग आती है।

बहुत बड़ा मोती

अब तक ज्ञात सब से बड़ा प्राकृतिक मोती है 'लाओट्ज मोती' । इसकी लंबाई है ९.५ इंच (२४१ मि.मी.) और व्यास है ५.५ इंच (१४० मि.मी.) । वज़न इसका १४ पाउंड (६.३७ कि.ग्र.) है । यह मोती १९३६ में एक बड़े सीप से प्राप्त हुआ था ।

नील नदी के नीचे एक और नदी

१९५८ में रेडियो आइसोटोप्स की मदद से मिस्र की नील नदी के नीचे बहनेवाली एक और नदी का पता चला है । इसका वार्षिक प्रवाह नील नदी के वार्षिक प्रवाह से छः गुना अधिक आंका गया है ।
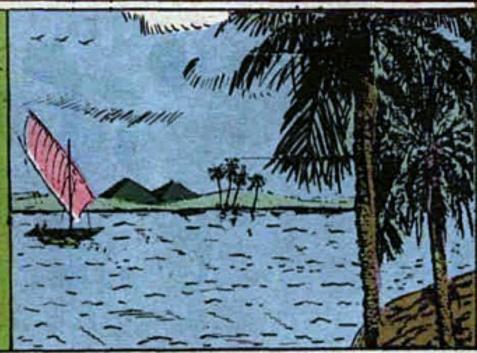
NOW with the added fun of SPUTNIK Junior!
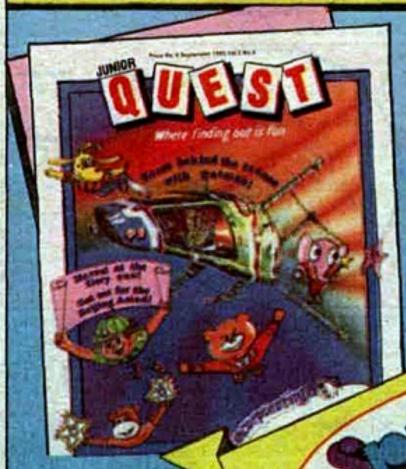
Selections from Sputnik Junior!.

* Colourfully illustrated stories and cartoons.
* Superb science fiction
* Entertainment and general knowledge

64 packed pages!
At just Rs. 5/-

Sputnik Junior

To subscribe write to,
JUNIOR QUEST,
Dolton Agencies,
Chandamama Buildings,
N.S.K. Salai, Vadapalani,
Madras: 600 026.

A Chandamama Vijaya Combines publication

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जुलाई १९९१ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

Suraj N. Sharma

B. Sreesailam

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० मई '९१ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मार्च १९९१ की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो: दोस्ती इन की निराली है!!

द्वितीय फोटो: गुड़िया रानी सयानी है!

प्रेषिका: ए. बनजा, मकान नं. ५४८/३/ए. पो. बाल्कोनगर, कोरबा (म.प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा: रु. ३६/-

चन्दा भेजने का पता:

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

मिठाई में
नारियल
मुँह में
हलचल
nutrine
COOKIES
nutrine
COOKIES
बच्चे झूमें-गायें, मौज मनायें
कोकानाका कुकीज